आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 8 ★ मूल्य : 10 रु.
10 अगस्त, 2009 ★ भाद्रपद 2066

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
महिमामयी यह 'जिनवाणी'॥

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

पीयें धोवन पानी, बोले मीठी वाणी यही कहे जिनवाणी ।

गहने
अलंकार
नक्काशीवाले
चमकिले
तेजस्वी
ओजस्वी

एक है वैसा, मुझे चाहिए था जैसा...

स्वर्णतीर्थ

प्रभावी
अदभूत
अक्षय
अर्थपूर्ण
अष्टपैलू
अगम्य
मोहर
अनमोल
अप्रतिम
माणिक

रतनलाल सी. बाफना ज्वेलर्स
सोने ◆ चांदी हिरा ◆ मोती
०२५७-२२२५९०३,३९०३ जलगाँव ◆ औरंगाबाद ०२४०-२२४४५२०,२२
जहाँ विश्वास ही परंपरा है।

जिनवाणी *हिन्दी-मासिक*

卐 संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक
प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003 (राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड
जोधपुर-342005 (राज.), फोन-0291-2730081
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-RJ/JPC/M-07/2009-11

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

जे संखया तुच्छ परप्पवाई,
ते पिज्जदोसाणुगया परज्झा।
एए अहम्मे त्ति दुगुञ्छमाणो,
कंखे गुणे जाव सरीरभेए॥

-उत्तराध्ययन सूत्र, 4.13

परवादी संधेय आयु को,
रागद्वेषवश हो कहते।
उन धर्मशून्य जन को तज मन से,
गुण-अर्जन अन्तिम दम करते॥

अगस्त 2009
वीर निर्वाण संवत् 2535
भाद्रपद 2066

वर्ष 66 अंक 8

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 120 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 11000/-
आजीवन देश में : 500 रु.	संरक्षक सदस्यता : 5000/-
आजीवन विदेश में : 5000 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 3000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क भेजने का पता- जिनवाणी, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-03 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail: jinvani@yahoo.co.in
ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो

विषयानुक्रम

सम्पादकीय -	गुणव्रत, शिक्षाव्रत और नैतिकता	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	9
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	10
प्रवचन-	संयम में बढ़ते चरण : मोह-ममता का होता क्षरण	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.	11
	पर्युषण पर्व: साधना का पर्व	-उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.	16
शोधालेख -	भारतीय तंत्र साधना और जैन धर्म-दर्शन(1)	-डॉ. सागरमल जैन	24
प्रासङ्गिक-	जैन होने का गौरव	-डॉ. दिलीप धींग	30
	मित्ती मे सव्वभूएसु	-पं. शान्तप्रकाश सत्यदास	42
चिन्तन-	क्रोध का एक प्रमुख कारण : असहिष्णुता	-श्री चाँदमल बावेल	37
अंग्रेजी-स्तम्भ-	CATURVINSATISTAVA	*-Dr. Priyadarshana Jain*	44
विशिष्ट प्रश्नोत्तर-	दशवैकालिक सूत्र से पाएँ तात्त्विक बोध(1)	-संकलित	49
धारावाहिक-	जम्बूकुमार (63)	-जैन दिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.	53
उपन्यास-	सुबह की धूप (6)	-श्री गणेशमुनि जी शास्त्री	59
नारी-स्तम्भ-	वैयावृत्त्य का आनन्द	- श्रीमती सुशीला बोहरा	64
युवा-स्तम्भ-	धर्म कहाँ से शुरू होता है	-श्री रणजीत सिंह कूमट	69
अध्यात्म-	सद्गुण आत्मा का स्वभाव	- श्री कन्हैयालाल लोढ़ा	73
बाल-स्तम्भ-	कर्मफल	- सुनयना गेलड़ा	75
स्वास्थ्य-विज्ञान-	स्वास्थ्य हेतु आवश्यक जीवन शैली	- डॉ. चंचलमल चोरडिया	77
जीवन-व्यवहार-	मच्छर की जयणा	- श्री जे.के.संघवी	81
विचार-	खमामि सव्वजीवाणं	-श्री नवरतनमल डोसी	29
	भ्रूण-हत्या एक अभिशाप	-डॉ. प्रतिभा जैन	41
	समय-प्रबन्धन	- श्री अशोक कवाड़	58
प्रेरक प्रसंग-	कंजूसों का बाप	-श्री राजीव माथुर	48
	पछतावा रह गया	- आर.प्रसन्नचन्द चोरडिया	83
	जीवन की सार्थकता	-श्री आनन्दराज जी. जैन	86
गीत/कविता-	पर्व पर्युषण आया है	-श्रीमती कमला सुराणा	51
	मृत्यु-बोध	- श्री कस्तूरचन्द जैन 'अष्टम'	52
	बनना है मुझे भगवान	- श्री त्रिलोकचन्द जैन	72
	पाँच अभिगम पालें	- डॉ. दिलीप धींग	85
साहित्य समीक्षा-	नूतन साहित्य		87
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन		94
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		112

सम्पादकीय

गुणव्रत, शिक्षाव्रत और नैतिकता

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

पाँच अणुव्रतों के आधार पर नैतिकता की चर्चा पूर्व के पाँच अंकों में की जा चुकी है। श्रावक के बारह व्रतों में पाँच अणुव्रतों के साथ तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत भी सम्मिलित हैं। तीन गुणव्रत हैं- दिशा परिमाण व्रत, उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत और अनर्थदण्ड विरमण व्रत। चार शिक्षाव्रत हैं- सामायिक व्रत, देशावगासिक व्रत, पौषधोपवास व्रत और अतिथि-संविभाग व्रत। इन गुणव्रतों एवं शिक्षाव्रतों से श्रावक का जीवन आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत बनता है। गुणव्रत जहाँ पाँच अणुव्रतों के पालन को सरल बनाते हैं, वहाँ शिक्षाव्रत मानव को साधनामय जीवन का प्रशिक्षण देते हैं। गुणव्रतों एवं शिक्षाव्रतों की आध्यात्मिक उन्नति की दृष्टि से तो उपयोगिता है ही, किन्तु नैतिक जीवन से भी इनका गहरा सम्बन्ध है।

यहाँ हम गुणव्रतों में उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत तथा अनर्थदण्ड विरमण व्रत के आधार पर तथा शिक्षाव्रतों में अतिथि संविभाग व्रत के आधार पर नैतिकता की चर्चा करेंगे।

भगवान् महावीर ने इच्छा का परिमाण करने के लिए परिग्रह परिमाण व्रत के साथ उपभोग-परिभोग परिमाण व्रत को भी स्थान दिया है। मनुष्य किस प्रकार सुख से जिए, कैसे वह इच्छाओं को नियन्त्रित कर अपने जीवन को व्यवस्थित रीति से संचालित करे, इसका अभ्यास इन दोनों व्रतों के पालन से सम्भव है। उपभोग-परिभोग की अनेक वस्तुएँ हैं। खाना-पीना, पहनना-ओढ़ना, जाना-आना आदि क्रियाएँ विभिन्न भोज्य, पेय, वस्त्र, यान आदि वस्तुओं से सम्पन्न होती हैं। इन वस्तुओं की असीम आकांक्षा दुःख उत्पन्न करती है। दुःख के इस कारण को प्रभु महावीर ने समझा एवं गृहस्थों को यह उपदेश दिया कि तुम परिग्रह को सीमित करो, साथ ही उपभोग एवं परिभोग की वस्तुओं का प्रयोग सीमित करो। जो भोगोपभोग की वस्तुओं के प्रयोग को सीमित करता है वही व्यक्ति परिग्रह परिमाण करता हुआ उससे विरत होने में सक्षम बनता है।

मनुष्य का यह नैतिक दायित्व है कि जिस प्रकार हम जीवित रहना चाहते हैं उसी प्रकार वह अन्य प्राणियों को भी जीने का अधिकार प्रदान करे। इसीलिए सचित्त वस्तुओं के प्रयोग से बचने के लिए व्रतों का विधान है। जो भोगोपभोग की वस्तुओं को सीमित करता है वह संयम के मार्ग पर सरलतापूर्वक आगे बढ़ता है तथा अन्य प्राणियों की स्वतंत्रता को सुरक्षित रखता है। श्रावक-श्राविका के लिए 14 नियमों का विधान है। इन 14 नियमों में दिन भर में काम आने वाली वस्तुओं के प्रयोग की मर्यादा की जाती है। उदाहरण के लिए- पूरे दिन में भोजन में15 द्रव्यों से अधिक का सेवन नहीं करना, दो जोड़ी जूतों से अधिक नहीं पहनना, 3 जोड़ी वस्त्रों से अधिक धारण नहीं करना आदि। जो अपने उपभोग की वस्तुओं में इतनी मर्यादा करके चलता है, वह दूसरों के प्रति सहज ही नैतिक दायित्व का निर्वाह कर सकता है। किन्तु यह भी तब सम्भव है जब भीतर से इच्छाओं, वासनाओं अथवा आकांक्षाओं पर सहज नियन्त्रण हो। बाहर से त्याग करके भी जो भीतर में अनन्त इच्छाओं को पालकर चलता है, उसके व्यवहार में उतनी नैतिकता नहीं आ सकती है।

भोगोपभोग परिमाण व्रत में 26 प्रकार की मर्यादाएँ निरूपित हैं। इनमें टावल, दंतमंजन, फल, अभ्यंगन, उबटन, स्नान, वस्त्र, विलेपन, आभूषण, शयन, सचित्त वस्तु आदि के प्रयोग को मर्यादित किया गया है। आज मनुष्य अधिक से अधिक वस्तुओं का भोग या उपभोग करना चाहता है। वह इनमें ही सुख की उत्पत्ति मानकर चलता है। प्रभु महावीर ने इस मान्यता को मिथ्यात्व की कोटि में रखा है। असली सुख वस्तुओं से नहीं, विकारों पर विजय से प्राप्त होता है। वस्तुओं का उपभोग करते रहें एवं विकार बढ़ाते रहें तो दुःख से मुक्ति कदापि संभव नहीं है। आज जो पर्यावरण में प्रदूषण बढ़ा है, उसका एक मुख्य कारण अनियन्त्रित भोगोपभोग की प्रवृत्ति है। वाहनों के कारण वायु का प्रदूषण, कारखानों के कारण जल का प्रदूषण, अमर्यादित खनन के कारण पृथ्वी का प्रदूषण बढ़ रहा है। रेडियो, टी.वी., मोबाइल एवं ध्वनि प्रसारक यंत्रों से ध्वनि प्रदूषण बढ़ रहा है। आकाश में ओजोन परत में छेद भी प्रदूषण का परिणाम है।

दुनिया में आज भोगोपभोग मुख्य आकर्षण का केन्द्र है। पाँच इन्द्रियों को और मन को संतुष्ट करने के लिए निरन्तर नई-नई वस्तुएँ बाजार में आ रही हैं। नई आवश्यकताओं को जन्म दिया जा रहा है। कुछ दिनों बाद मनुष्य नई

वस्तुओं को प्राप्त करके भी नीरसता का अनुभव करने लगता है, किन्तु अधिकाधिक भोग सामग्री का उपयोग मनुष्य के प्रति ही नहीं प्राणिमात्र के प्रति अनैतिक आचरण है, क्योंकि इससे दूसरों के अधिकार का हनन होता है।

भोगोपभोग परिमाण व्रत में ही पन्द्रह कर्मादानों की चर्चा है, जिनमें अंगारकर्म, वनकर्म, यन्त्रपीलन कर्म आदि अधिक हिंसा के व्यापार करने का निषेध किया गया है। इनका निषेध कर्म-बंधन से तो बचाता ही है, साथ ही अन्य प्राणियों के जीवन की रक्षा भी करता है। अन्य प्राणियों की जीवन-रक्षा हमारा नैतिक कर्त्तव्य है।

अनर्थदण्ड विरमण व्रत एक महत्त्वपूर्ण व्रत है, जो मानव को बाह्य एवं भीतरी प्रदूषण से बचाता है। अपध्यान अर्थात् दुर्ध्यान करना अनर्थदण्ड है, प्रमाद का आचरण अनर्थदण्ड है, हिंसा में प्रयुक्त होने वाले शस्त्रों का उत्पादन एवं वितरण अनर्थदण्ड है, इसी प्रकार पाप कर्म का उपदेश देना भी अनर्थदण्ड है। बिना प्रयोजन के हिंसा करना, झूठ बोलना आदि भी अनर्थदण्ड की कोटि में आते हैं। मनुष्य बिना कारण ही अनर्थदण्ड का शिकार होता रहता है। प्रभु महावीर ने उसे सावचेत किया है कि वह ऐसी प्रवृत्तियों से बचे जो आत्म-चेतना को मलिन बनाती हैं। दुर्ध्यान, प्रमाद, पापकर्मोपदेश, शस्त्र-प्रदान आदि चित्त को मलिन बनाते हैं। मलिन चित्त वाला न्याय-अन्याय को नहीं देखता, वह अन्य जीवों की चेतना के प्रति उतना संवेदनशील भी नहीं होता, इसलिए उससे नैतिकता का आचरण करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। किन्तु दुर्ध्यान, प्रमाद आदि से बचकर जीवन जीने वाला व्यक्ति अपने चित्त को मलिन होने से भी बचाता है तथा अन्य प्राणियों के लिए भी हितकर चिन्तन ही प्रस्तुत करता है।

मनुष्य जिह्वा से वाचाल है। अनर्गल प्रलाप करता रहता है। यह भी अनर्थकारी होने से त्याज्य है। जिह्वा से अपमानकारी, छेदकारी, भेदकारी भाषा का प्रयोग दूसरों के अनादर का सूचक है, अतः नैतिक दृष्टि से अनर्गल बोलना उचित नहीं है।

शिक्षाव्रतों में अतिथि-संविभाग व्रत का नैतिकता की दृष्टि से विशेष महत्त्व है। यद्यपि इस व्रत में साधु-साध्वी को अतिथि मानकर उनके लिए भोजन आदि में संविभाग करने की बात कही गई है। उनको आहार, शय्या आदि प्रदान करना श्रावक-श्राविका का दायित्व है। किन्तु इस व्रत के आधार पर

समाज के जरूरतमन्द व्यक्तियों का सहयोग भी श्रावक-श्राविका का नैतिक दायित्व बनता है। इसे जैन दर्शन में वात्सल्य के रूप में भी स्थान दिया गया है। मेरे पास आवश्यकता से अधिक है तो मैं अभावग्रस्त व्यक्ति को अनुकम्पा पूर्वक आत्मीयता से सहयोग करूँ, यह मेरा नैतिक दायित्व है। आज एक भाई समृद्ध है और दूसरा निर्धन तो भी समृद्ध भाई निर्धन का सहयोग करने के लिए तत्पर नहीं होता। यह उसके हृदय की कठोरता एवं असंवेदनशीलता का द्योतक है।

प्रभु महावीर ने नैतिकता का सीधा-सीधा उपदेश नहीं दिया, तथापि बारह व्रतों के माध्यम से नैतिकता के सूत्र सम्प्रेषित होते हैं। भगवान् महावीर का लक्ष्य मानव को भीतर से निष्कलुष बनाकर उसकी चेतना का व्यापक शोधन करना था। किन्तु आध्यात्मिक पथ पर चरण बढ़ाने वाला व्यक्ति निश्चित ही जानबूझ कर अनैतिक आचरण करने को तत्पर नहीं होता।

आध्यात्मिकता एवं नैतिकता में भारी अन्तर है। आध्यात्मिक व्यक्ति जहाँ आत्मशुद्धि एवं निर्विकारता को लक्ष्य लेकर चलता है, वहाँ नैतिक व्यक्ति आत्मशुद्धि का लक्ष्य न होने पर भी सामाजिक दृष्टि से अपने दायित्व को परिभाषित करता है एवं तदनुकूल आचरण करता है। एक नैतिक व्यक्ति अपनी संतान को पढ़ा-लिखा कर योग्य बनाता है। समुचित वय में उसका विवाह करता है, किन्तु आध्यात्मिक व्यक्ति सांसारिक मोह-माया को छोड़कर संन्यास का मार्ग भी ग्रहण कर सकता है। नैतिकता के मानदण्ड समाज, परिवार, राष्ट्र आदि को ध्यान में रखकर तय किए जाते हैं। जबकि अध्यात्म का मापदण्ड इन सबसे परे आत्मशुद्धि को लक्ष्य कर निर्धारित किया जाता है। इतना अवश्य है कि आध्यात्मिक पथ पर आरूढ़ व्यक्ति किसी का अहित नहीं चाहता। वह अपनी भाँति दूसरों को भी विकार मुक्त देखना चाहता है। जो आध्यात्मिक दृष्टि लिए हुए है वह हिंसा, झूठ, चोरी, व्यभिचार, परिग्रह आदि विभिन्न पापों से स्वयं भी बचता है तथा दूसरों को भी बचने का उपदेश करता है। जबकि मात्र नैतिकता का ढोल पीटने वाला व्यक्ति आवश्यक नहीं कि आत्मशुद्धि का कोई लक्ष्य लेकर चल रहा हो। यहाँ एक बात यह ध्यातव्य है कि जीवन में पहले यदि नैतिकता का प्रवेश हो जाए तो उसके लिए आध्यात्मिकता का मार्ग सुकर हो जाता है। नैतिकता जहाँ विभिन्न अपेक्षाओं एवं मानदण्डों से तय होती है, वहाँ आध्यात्मिकता का एक ही मापदण्ड है-राग-द्वेष आदि विकारों पर विजय।

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

(भिक्षु के लक्षण)

अक्कोसवहं विइत्तु धीरे मुणी. चरे लाढे निच्चमायगुत्ते।
अव्वग्गमणे असंपहिट्ठे जे कसिणं अहियासए स भिक्खू॥3॥
पन्तं सयणासणं भइत्ता सीउण्हं विविहं च दंसमसगं।
अव्वग्गमणे असंपहिट्ठे जे कसिणं अहियासए स भिक्खू॥4॥
नो सक्किययमिच्छइ न पूयं नो वि य वन्दणगं, कुओ पसंसं?
से संजए सुव्वए तवस्सी सहिए आयगवेसए स भिक्खू॥5॥
जेण पुण जहाइ जीवियं मोहं वा कसिणं नियच्छइ।
नरनारिं पजहे सया तवस्सी न य कोऊहलं उवेइ स भिक्खू॥6॥

-उत्तराध्ययन सूत्र, पन्द्रहवाँ अध्ययन, सभिक्षुकम् 3-6

कठोर वचन और वध (मारपीट) को (अपने पूर्वकृत कर्मों का फल) जान कर जो मुनि धीर (अक्षुब्ध=सम्यक् सहिष्णु) होकर विचरण करता है, जो (संयमाचरण से) प्रशस्त है, जिसने असंयम-स्थानों से सदा आत्मा को गुप्त-रक्षित किया है, जिसका मन अव्यग्र अनाकुल (अनाकुल) है, जो हर्षातिरेक से रहित है, जो (परीषह, उपसर्ग आदि) सब कुछ (समभाव से) सहन करता है, वह भिक्षु है॥3॥

जो निकृष्ट से निकृष्ट शयन (शय्या, संस्तारक या वसति-उपाश्रय आदि) तथा आसन (पीठ, पट्टा चौकी आदि) (उपलक्षण से भोजन, वस्त्र आदि) का समभाव से सेवन करता है, जो सर्दी-गर्मी तथा डांस-मच्छर आदि के अनुकूल और प्रतिकूल परीषहों में हर्षित और व्यथित(व्यग्रचित्त) नहीं होता, जो सब कुछ सह लेता है, वह भिक्षु है॥4॥

जो साधक न तो सत्कार चाहता है, न पूजा (प्रतिष्ठा) और न वन्दन चाहता है, भला वह किसी से प्रशंसा की अपेक्षा कैसे करेगा? जो संयत है, तपस्वी है, जो सम्यग्ज्ञान-क्रिया से युक्त है, जो आत्म-गवेषक (शुद्ध-आगमस्वरूप का साधक) है, वह भिक्षु है॥5॥

जिसकी संगति से संयमी जीवन छूट जाए और सब ओर से पूर्ण मोह (कषाय-नोकषायादि रूप मोहनीय) से बंध जाए, ऐसे पुरुष या स्त्री की संगति को जो त्याग देता है, जो सदा तपस्वी है, जो (अभुक्त-भोग सम्बन्धी) कुतूहल नहीं करता, वह भिक्षु है॥6॥

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

विश्व की एकता का नारा लगाने वाले व्यक्ति कभी मिलेंगे तो कहेंगे- जातीयता में कुछ नहीं पड़ा है, प्रान्तीयता में कुछ नहीं है, अब राष्ट्रीयता भी कुछ नहीं है। अब तो अन्तरराष्ट्रीय की कल्पना करके उसका खाका खींचेंगे। उनकी बात सुनकर जनता विस्मित रह जाती है। लेकिन उनके घर पर जाकर आप दृश्य देखिये, भाई-भतीजों और बच्चों से इस प्रकार लड़ते हैं कि आप देख कर दंग रह जायेंगे। यह दीवार तुमने इधर क्यों बना ली? खेत की रेखा टेढ़ी-मेढ़ी क्यों खींच ली? इसके लिए आपस में जूती पैजार तक हो जाता है, मारपीट हो जाती है और न्यायालयों के द्वार खटखटाये जाते हैं। आदर्शवाद का यह कितना क्रूर मजाक है? जरा सोचें।

आदर्शवाद और यथार्थवाद दो मुख्यवाद हैं। आदर्शवाद सुनने में, देखने में अच्छा लगता है। जिस समय आदर्शवादी लोग बात करते हैं, उस समय कहते हैं- "हम तो सबकी मानते हैं, सबकी सुनते हैं, हमारे लिए सब मत-मतान्तर बराबर हैं। हमें न तो किसी से द्वेष है, और न किसी से प्यार।" ऐसी बातें करते हैं, तब वे बातें सुन्दर लगती हैं। लेकिन उनका असली जीवन टटोलें तो पता चलेगा कि अपने ही कुटुम्ब के लोगों तथा समाज व साधर्मियों के साथ उनका व्यवहार कैसा है? जो व्यक्ति अपने समीप के लोगों से ही समान व्यवहार नहीं कर सकते, वे व्यक्ति देश, देशान्तर और जातियों के भेद मिटाने की कामना करें, तो यह प्रवंचना ही है।

अर्थनीति मनुष्य को लोभी, कपटी, व अशान्त बनाती है। मानव मानव को लड़ाती है, जबकि धर्मनीति प्राणिमात्र में बंधुत्व भाव उत्पन्न करती है। क्रोध की आग में प्रेम का सिंचन करती है।

दो कारणों से जीव केवली के प्रवचन को भी नहीं सुन सकता। गौतम ने जिज्ञासा भरा प्रश्न किया- "हे भगवन्! कौनसे दो कारण हैं, जो उत्तम धर्म श्रवण में बाधक हैं?" प्रभु ने कहा- "आरम्भ और परिग्रह।" इन दोनों में जो जीव उलझा है, वह इन्हें अच्छी तरह समझकर जब तक इन उलझनों की बेड़ी को काटकर बाहर नहीं निकल जाता, तब तक केवली प्ररूपित धर्म को नहीं सुन सकता।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

संयम में बढ़ते चरण : मोह-ममता का होता क्षरण

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

जैनाचार्य पूज्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. द्वारा पालड़ी, अहमदाबाद में रविवार 19 जुलाई, 2009 को फरमाए गए प्रवचन के प्रस्तुत अंश का संकलन श्री जगदीश जी जैन द्वारा किया गया है।-सम्पादक

जैन संस्कृति अध्यात्म प्रधान संस्कृति है। यहाँ जीवन का मूल्य त्याग से, तप से, गुणों से और धर्म से माना गया है। इस संस्कृति में न जीने का प्रलोभन है, न ही मरने का भय। संसार में जीना एक कला है तो मरना भी एक कला है; या यों कहें- यहाँ जन्म भी एक खेल है और मरण भी एक खेल है। जीव रूपी खिलाड़ी इस खेल को सुचारू रूप से खेले - तो जन्म-मरण का अन्त कर सकता है। यह जीव अनन्त काल से जन्मता रहा है- यों कहें इस जीव ने दो ही काम किये हैं: जन्म और मरण। इसलिये जन्मने में खुशी नहीं और मरण में दुःख नहीं। ऐसा कोई पल नहीं, ऐसा कोई क्षण नहीं, जब जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो। हर समय अनन्त जीव मरते हैं, जन्मते हैं।

महत्त्व जन्म का नहीं है - महत्त्व है जीवन का। जिसने जीवन जीना सीख लिया- उसने मरण भी सीख लिया। इसलिये आज एक ऐसे व्यक्ति की बात कही जा रही है, जिसने जीना और मरना दोनों सीख लिया। ऐसे व्यक्ति अपने कार्य कलाप से आदर्श बन जाते हैं, शुभ-संदेश छोड़ जाते हैं। इस प्रकार ऊँचे उठकर जिन्होंने जीवन को सुन्दर जीया वे थे- श्री सागरमल जी लोढ़ा। वे जड़-पत्थर को पहचानने वाले जौहरी थे, किन्तु संयम अंगीकार कर आत्मा को संयम तप के द्वारा तपाकर द्रव्य (जीव) के सच्चे पारखी बन गये। शास्त्र की भाषा में पत्थर भी संगति से (आत्म रूपी) रत्न बन जाता है। यह कला जीव से शिव और आत्मा से परमात्मा बनने की कला है।

आपके माता-पिता अंगुलि पकड़कर सन्तों के दर्शन कराने लाते थे, क्यों? संस्कारों का वपन करने के लिये- आज आपके दिमाग में वह बात ध्यान में है या नहीं, लेकिन मकान का पत्थर घिसने की बात दुकान को आकर्षक बनाने की

बात, घर का सुन्दर निर्माण करने की बात अवश्य ध्यान में है। परन्तु जीवन बनाने की बात धर्म के आचरण की बात कितनी ध्यान में है? सागरमल जी में समर्पणता के साथ विनीतता थी। गाथा के माध्यम से कहूँ-

आणाणिद्देसकरे गुरुणमुववायकारए।
इंगियागारसंपण्णे से विणीए ति वुच्चइ॥

-उत्तराध्ययन सूत्र 1, गाथा-2

गुरुचरण की सन्निधि में उन्होंने अपना जीवन बिताया। आवश्यक कार्य के अतिरिक्त अलग नहीं रहे। संयमी जीवन जीने वाला अन्तेवासी सदैव नजदीक रहता है। बुराइयाँ एकान्तता में, स्वच्छंदता में आती हैं। पिता के साथ पुत्र बैठता हो, छात्र शिक्षक के पास बैठता हो, इसी तरह शिष्य गुरु के पास बैठता हो तो उसमें बुराई नहीं आयेगी। हम योग्यता का अंश मात्र आने पर आसन अलग लगाते हैं। कमरे में बन्द रहते हैं, दूर रहने की चेष्टा रहती है तो यह उतार का, ढलान का, अवनति का रास्ता है। जो समीप बैठते हैं, उनका जीवन-निर्माण हो जाता है। लाभचन्द जी लोढ़ा जो अध्यक्ष थे, रिश्ते में भी थे - उनके पास सेवा में बैठ गये। सागरमल जी ने कहा- मैं अल्पज्ञ हूँ, कम साधना वाला हूँ, जीवन-निर्माण करना चाहो, तो मेरे पास नहीं, आचार्य भगवंत के समीप बैठो। पूज्य आचार्य भगवंत (श्री हस्तीमल जी म.सा.) ने एक बार पीपाड़ प्रवचन सभा में उद्घाटित किया- मैं एक बार सागरमुनि जी की सेवा में बैठ गया तो मुझसे कहा- मुनिराज आप आचार्य श्री के चरणों में जाओ.....वहाँ आपको ज्ञान-ध्यान की, जीवन निर्माण की सामग्री मिलेगी। दीक्षा में बड़े होते हुए भी आचार्य श्री का मनोनयन होने के बाद वे स्थण्डिल के लिए पातरी स्वयं (सागरमुनि जी) ले जाते थे। 'काले कालं समायरे' साधक समय-समय पर अपना सब कार्य करे। सब काम छोड़कर सेवा को प्रधानता दी जावे। बंदूक की गोलियाँ नहीं, बम के गोले गिर रहे हों, ऐसे समय हुक्म मिलने पर सैनिक डटा रहता है, कंकरों पर लेट जाता है। प्राण संकट में हैं फिर भी युद्ध के मोर्चे पर सन्नद्ध है। इसी तरह साधक संयम मार्ग में परीषह आने पर समभाव रखता है। चौथा प्रहर आया। प्रतिलेखन चालू, प्रतिक्रमण के समय प्रतिक्रमण। स्वाध्याय के समय में स्वाध्याय तथा सेवा के समय सेवा का लक्ष्य रहता है। जिस समय जो करना, उस समय वे तत्पर हो जाते दूसरों को भी खयाल दिलाते। आज मोह की स्थिति विचित्र है। प्रतिक्रमण की

क्रिया छोड़कर परिवारजनों से बात करने चले आते हैं। कभी तो आहार छोड़कर भी आने वाले की बातें सुनी है। मोह के कारण अपना नियम एवं समय सारिणी नहीं बदलें। ये उत्थान के मार्ग नहीं है।

साधनाशील व्यक्ति के लिये जगह-जगह कहा गया है, लौकेषणा में नहीं जावे। परिचय नहीं करे। लौकेषणा में आयेगा तो भीतर में आत्म स्वरूप को भुलायेगा। अंतरंग उत्थान हेतु स्वाध्याय-ध्यान बढ़ेगा तो ममता घटेगी, ममता घटेगी तो आश्चर्यकारी काम कर जायेगा। संवत्सरी का एक उपवास भी मुनिश्री के कठिनाई से होता था। रोगी, वृद्ध, स्थविर हर संत को इस दिन का उपवास करना होता है। वे उपवास करते तो गले में कांटे पड़ जाते। पेय पदार्थ भी मुश्किल से गले से नीचे उतरता। दीक्षा के बाद उन्होंने एक भी व्याख्यान नहीं दिया। तप उनसे होता नहीं था। वे पातरा पोंछते - तीर्थंकर गोत्र बांधने में सहायक वैयावृत्त्य करते-रत्नाधिक हो या छोटे, सबकी अग्लान भाव से सेवा का लक्ष्य रखते। मैं स्वयं नहीं पढ़ सकूँ, तो पढ़ने वालों की सेवा कर उनका समय बचाकर उन्हें आगे बढ़ाऊँ। वैय़ावृत्त्य कैसे होती है, क्या समझकर की जाती है- वाह-वाही के लिए, लोगों को दिखाने के लिये। यह वैयावृत्त्य का सच्चा स्वरूप नहीं है। सामने वाले को साता मिले, समाधि मिले, ऐसा भाव एवं प्रयत्न रहे तथा तकलीफ भी उठानी पड़े तब भी हर्षित उल्लसित भाव रहे। सेवा सच्चे मन से, प्रमोदभाव से करे, यह वैयावृत्य है। ऐसे उनके भाव थे। यदि पैसा पास में है तो चाचा रो, मामा रो, मौसा रो बेटो भी सेवा करने लग जासी- यदि नहीं है तो घर के भी पूछण वाले नहीं।

पाचनशक्ति की कमजोरी होने पर भोजन लेने की इच्छा कम हो जाती है। धन्ना जी का नाम सुना होगा उनकी भी ऐसी स्थिति बन गई थी। संतों के आग्रह करने पर उन्होंने कहा- थम्बो धान खावे, तो धन्नो धान खावे। अर्थात् अब यह शरीर मांगता नहीं। यह जावे उसके पहले मैं स्वयं इसे छोड़ दूँ। छूटने में दुःख है, छोड़ने में सुख है। जब यह जान लिया कि यह नहीं मांगता फिर इसे क्यों दिया जाय? यह समाधिमरण की तैयारी है। जबकि आत्महत्या मनोकामना पूरी न होने की स्थिति में अज्ञानी करते हैं। यह शरीर निश्चित छूटेगा, किन्तु समाधिपूर्वक छोड़ दोगे तो आनन्द आयेगा।

एक उपवास समाधि के साथ न करने वाले सागरमुनि जी की संथारे की भावना हुई। साथ में छोटे संत थे। उनसे कहा- मैं संथारा स्वीकार करना चाहता

हूँ। छोटे संतों ने मुनि जी की भावना को बड़े संत सुजानमल जी के पास एवं पदवी को प्राप्त करने वाले (पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा.) जो रियां विराज रहे थे, समांचार कहलवाये। वापस समाचार आये कि उनके आने की प्रतीक्षा करें। श्री सागरमुनि जी ने कहा- "ओ जीव! पूछन जाय। जब तक वे नहीं आवें तब तक पानी का आगार रख, शेष का त्याग।" समाचार पूज्य श्री के पास पहुँचे। लघु लक्ष्मीचंद जी म.सा. पीपाड़ विराज रहे थे। संथारा चलने के बारे में प्रज्ञाचक्षु धूलचन्द जी सुराणा से पीपाड़ पुछवाया। सुराणा जी कवि थे। ज्योतिष का ज्ञान भी था। घड़ी का एक-एक पुर्जा खोलकर रख देते, वापस जमा देते। दवाइयों की शीशियाँ कितनी ही रखी हों हाथ आवश्यकता वाली शीशी पर जाता, ऐसे सिद्धहस्त सुराणा जी ने बताया कि जिस नक्षत्र में संथारा लिया है उस दृष्टि से लम्बा चलेगा। एक महीने पहले सीझने वाला नहीं है। पूज्य श्री धीरे-धीरे विहार फरमाकर पधार सकते हैं। संथारा किशनगढ़ में चल रहा था। अमरचंद जी छाजेड़ की हवेली में। ईर्ष्यालु लोग थे। राज्य में शिकायत कर दी। जैन संत को भूखा मारा जा रहा है। राजा ने दीवान को जो अंग्रेज था, जांच पड़ताल करने भेजा। दीवान गया। पूछा- सागरमल जी आप अन्न ग्रहण क्यों नहीं कर रहे हैं। लोगों का खयाल है आपको जबरदस्ती भूखा रखा जा रहा है। सागरमुनि जी ने समझाते हुए कहा- डॉक्टर के मना करने पर आप अपथ्य का सेवन करते हैं क्या? तप-संयम जबरदस्ती नहीं होता, यदि जबरदस्ती होता है तो तप बदनाम होता है। उदाहरण दिया- मान लिजिए आप किराये के मक़ान में रह रहे हैं। मकान मालिक खाली कराना चाहता है अब आप राजी से खाली करोगे या मकान मालिक द्वारा सामान बाहर फेंकने के बाद? आगे समझाते हुए कहा- आपकी जगह दूसरे दीवान की नियुक्ति हो जाये। अब आपको दीवान का बंगला खाली करना पड़ेगा। यदि स्वेच्छा से खाली नहीं करोगे तो जबरदस्ती खाली करवा लिया जावेगा। यही स्थिति यहाँ है। यह शरीर मुझे छोड़ना चाहता है। यह छोड़े इसके पहले ही मैं इसे स्वेच्छा से छोड़ रहा हूँ। दीवान मुनि श्री के तथ्यों से संतुष्ट हुआ। वातावरण शांत हो गया। मुनि श्री का 42 दिन तक तिविहार और 17 दिन चौविहार कुल 59 दिन का संथारा आया।

जब तक ममता है, आसक्ति है, तब तक नवकारसी भी होने वाली नहीं है। यदि धन पर ममता/आसक्ति होगी तो दान नहीं होगा। हाथ भी ऊँचे नहीं

उठेंगे। ऐसे ही आहार में ममता है, आसक्ति है तो एक उपवास भी होने वाला नहीं है। ममता डुबाने वाली है।

इसी कड़ी में आसक्ति को छोड़ ममता का त्याग करने वाली महासती सूरजकंवर जी म.सा. का उल्लेख भी प्रासंगिक है। अजमेर की घटना है। महासती सूरजकंवर जी की तबियत अचानक बिगड़ गयी। हाथ पैर ठण्डे पड़ गये। नाड़ी की गति मन्द हो गई, ऐसा लगा दो चार घण्टे का भी जीवन नहीं है। क्या करना चाहिए। सतियों ने स्थिति को देख चौविहार संथारा करवा दिया। संथारे का पहला दिन बीता। सती जी ने कुछ हलचल की। दूसरा दिन हुआ और सती जी बैठने का प्रयास करने की स्थिति में आये। तीसरा दिन हुआ और प्रत्याख्यान करवाने लग गये। संथारे के चमत्कार से सभी विस्मित हो गये। सारे रोग समाप्त हो गये। अब क्या करना चाहिये सतियाँ जी ने निवेदन किया- आपकी क्या भावना है, जिससे आपके समाधि बढ़े? महासती सूरजकंवर जी ने पूछा- पहले मुझे यह बताओ संथारा - तिविहार पच्चखाया या चौविहार? सतियां जी ने कहा आपकी स्थिति ऐसी ही थी। इसलिये चौविहार का ही प्रत्याख्यान करवाया था। तो सूरजकंवर जी बोले- फिर मेरे लिये संथारा की भावना ही इष्ट है। होश हवाश के साथ 11 दिन संथारा चला। आसक्ति छूटे, साथ वालों के प्रति ममता कम हो। छूटना तो निश्चित है ही। जब छोड़ेंगे तब ही त्यागी बन सकोगे। वेश बाना बदलने के साथ ममता छूटना आवश्यक है। माता मरूदेवी की तरह ममता छूटे तो हाथी के ओहदे पर बैठे-बैठे गृहस्थ लिंग सिद्ध बन सकते हैं। जो वेष पहन लिया उसकी मर्यादा का पालन अवश्य करना। एक बहुरूपिया नाटक कर रहा था। उसकी कला से प्रसन्न हो राजा ने मोहरों से भरी थैली देनी चाही। बहुरूपिया बोला- यह खेल पेट के लिये कर रहा हूँ, यह वेश पहने राशि नहीं लूँगा। क्योंकि मुझे इस वेष की मर्यादा का पालन करना है। एक बहुरूपिया को उसकी मर्यादा का पूरा खयाल है। राजा मुस्कुराया, गलती महसूस की। रावण साधु का वेष धारण कर छद्म से सीता को हर ले गया। इन कारणों से इस साधु वेष के प्रति आस्थाएँ कम हो जायेंगी, संसार से संयम बदनाम हो जायेगा। इस वेष की लाज रखिये। समता की साधना से ममता घटाकर सागरमुनि जी की तरह जीना और मरना सीखें। भगवद् स्मरण कर, त्यागी बन, जीवन के अंतरंग में आचरण कर जाओगे तो यहाँ और वहाँ आनन्द प्राप्त कर सकोगे .....। ■

प्रवचन

पर्युषण पर्व : साधना का पर्व

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा.

उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. द्वारा जोधपुर चातुर्मास में 24 अगस्त, 2003 को फरमाए गए प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह सम्पादक श्री नौरतन जी मेहता ने किया है।-सम्पादक

भारतीय संस्कृति में पर्वों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा हुआ है। पर्व हमारी संस्कृति के सजग प्रहरी हैं। ये पर्व नहीं आयें तो हम संस्कृति भूल जायें। पर्व याद दिला देते हैं, जगा देते हैं। यही कारण है कि बिना निमंत्रण के, बिना न्यौता दिये आज चारों जगह इसी तरह का ठाट लगा हुआ है। चारों जगह व्यक्ति समा नहीं पा रहे हैं। आज हर व्यक्ति भावना से आया हैं इसलिए चार-चार जगह होते हुए भी स्थान की कमी अनुभव हो रही हैं। कभी-कभी इतनी विशाल संख्या हो जाती है कि कुछ कहा नहीं जा सकता। जयपुर चातुर्मास की समाप्ति के बाद में आचार्य भगवन्त ने चौड़ा रास्ते से विहार किया तो चौड़ा रास्ता भी संकड़ा हो गया। वह भक्ति का अतिरेक था। उन भगवन्त का अतिशय पहले था, अब भी काम कर रहा है। भगवन्त का अतिशय-प्रभाव आज भी परोक्ष रूप में वरदान के साथ चतुर्विध संघ को विकास की ओर ले जा रहा है।

पर्व दो तरह के हैं। एक लौकिक, एक लोकोत्तर। आज लौकिक पर्व भी है तो लोकोत्तर भी। बच्छ बारस लौकिक पर्व है। आओ म्हारा हंसराज, आओ म्हारा बच्छराज। लौकिक पर्व आमोद-प्रमोद, खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, घूमने-फिरने को लेकर होता है। लौकिक पर्व भौतिकता को लेकर मनाया जाता है तो लोकोत्तर पर्व आध्यात्मिकता को लेकर, आत्मा के उत्थान को लेकर, गुणों के विकास को लेकर मनाया जाता है। समय-समय पर आत्मोत्थान का संदेश लेकर पर्व आते हैं।

आज पर्वाधिराज पर्युषण पर्व है। इसको पर्व नहीं, पर्वाधिराज कहा। एक होता है महाराजा और एक होता है महाराजाधिराज। जो कई महाराजों के ऊपर हैं वे महाराजाधिराज। दीपावली के पर्व पर किले पर

'लोंग लिव हिज-हायनेस' लिखा रहता है। हमारे महाराजाधिराज चिरायु हों। जैसे महाराजाधिराज होते हैं वैसे ही पर्वों में सबसे ऊपर है पर्वाधिराज। पर्वाधिराज पर्युषण पर्व आत्म-विकास का पर्व है, साधना का पर्व है, जन्म-मरण के तापत्रय को शांत करने वाला तप है।

पर्वाधिराज पर्युषण पर्व साधना का पावन पर्व है। यह पर्व आत्मा को पवित्र करने वाला है। अनन्त काल से कर्मों का कचरा जो इकट्ठा हो गया उसको साफ करने का पर्व है। इस पर्व पर महापुरुषों के चरित्र को लेकर अन्तकृतदशांग सूत्र का वाचन होता है। क्यों होता है? कभी-कभी लोगों के मुख से ऐसा प्रश्न सुनने को मिलता है कि हर साल यही का यही सूत्र क्यों पढ़ा जाता है? वही दस राजकुमार हर वर्ष सुनते हैं। जब तक हम सिद्धि स्थान को प्राप्त नहीं हो जाते तब तक तो सुनना ही है। सुनाना इसलिए है कि महापुरुषों के जीवन-चरित्र को सुनकर हमारी भी भावना बने, हम भी जगत् के दुःखों को छोड़कर शाश्वत सुख को प्राप्त करें। यही पर्व का संदेश है और यही साधना का लक्ष्य है।

यह आत्मा विकारी अवस्था से स्वभाव दशा में आए। अनन्त काल बीत गया फिर भी विभाव दशा से स्वभाव दशा में आना नहीं हुआ। जीव इसी कारण तो परिभ्रमण कर रहा है। पर्वाधिराज पर्युषण यही शिक्षा दे रहे हैं। पर्युषण शब्द परि उपसर्ग एवं उष् धातु से बना है जिसका तात्पर्य है चारों तरफ से ध्यान हटाकर आत्मा के नजदीक रहना। आपके नजदीक कौन? घर नजदीक है, दुकान नजदीक है। अभी घर-दुकान के नजदीक जाने की जरूरत नहीं। वह वर्षों से चल रहा है। तन की, धन की, परिजन की आराधना निरन्तर चल रही है। धन की आराधना में कभी आदमी तन को भूल जाता है। धन के लिए रात-दिन एक कर देता है। भोजन आया हुआ, याद नहीं रहता। दुकान पर भीड़ है, भोजन करना है तो भी सुबह की शाम हो जाती है, कई-कई तो दिन भर नहीं खा पाते। दिन भर नहीं खाया, उसे कभी उपवास का कह दें तो मंजूर नहीं। दिन भर भूखे रहे, पर वह उपवास नहीं है। वह लोभ है, लालच है। उसमें निर्जरा का कांम नहीं है। यहाँ बैठकर सामायिक करें, स्वाध्याय करें, प्रवचन सुनें तो यह निर्जरा का

कारण है। संवर करें, पौषध करें। पर्वाधिराज पर्युषण के दिनों में संवर-साधना से कोई वंचित नहीं रहे। मैं तो कहूँगा जो जाजम पर बैठे हैं वे कम-से-कम इन पर्व के दिनों में अपने वस्त्रों का परिवर्तन करके सामायिक की वेशभूषा में आकर सामायिक करने वालों के साथ सम्मिलित हों। आपको यहाँ उपकरण भी तैयार मिल रहे हैं। आपको घर से बैठका लाने की जरूरत नहीं। किसी को दया करनी है, पौषध करना है तो भी साधन यहाँ उपलब्ध हैं। आज साधन तो बहुत बढ़े हैं, परन्तु साधना नहीं बढ़ रही है। आज स्थानक भी नए बन गये हैं। पहले स्थानक पुराने थे, कच्चे थे। स्थानक कच्चे थे तब श्रावक पक्के थे, आज स्थानक पक्के हैं तो श्रावकों में कचावट आ गई है। जितने-जितने साधन बढ़े हैं उतनी-उतनी साधना बढ़नी चाहिए। मैं आपको वस्त्र परिवर्तन का संकेत कर रहा हूँ, यह भारी नहीं है। मूर्तिपूजक तो घर में वस्त्र परिवर्तन कर नंगे पाँव मन्दिर जाते हैं। गुरुदेव फरमाते--यदि वस्त्र परिवर्तन नहीं होगा तो मन परिवर्तन कैसे होगा? सामायिक के वस्त्र पहनेंगे तो मन में यह भावना तो आयेगी कि अभी मैं सामायिक में हूँ।

आपने सिपाही देखा है। वह यदि सादे वेश में हो तो? यदि सादे वेश में वह चौराहे पर हाथ ऊँचा-नीचा करे तो लोग उसे पागल समझते हैं और वही सिपाही वेशभूषा में है तो....? एक सिपाही लड़ाई के मैदान में सादे कपड़ों में जाय और एक निश्चित ड्रेस में जाय तो उस ड्रेस का मन पर असर होता है। उसे जोश रहता है। आज आपके घर के कपड़े अलग हैं, रात में सोते वक्त कपड़े अलग हैं, कभी जीमने जावें तो कपड़े उस तरह के। आप सांसारिक कार्यों में समय-समय पर वस्त्र बदलते रहते हैं तो धर्म-स्थान में सामायिक के वस्त्र पहनने में हिचक क्यों? सामायिक की वेशभूषा एक पहचान है। संत इसी वेशभूषा के कारण पहिचाने जाते हैं। हजारों आदमियों के बीच में वे पहिचान में आ जाते हैं। एक सरदार की वेशभूषा है तो वह अनेकों में पहिचान लिया जाता है। आप अगर सामायिक की वेशभूषा में हैं एवं कोई भी सरकारी आदमी पकड़ने के लिए भी आया है तो वह दूर खड़ा रहेगा। जब तक साधना चल रही है तब तक हथकड़ी

डालना तो दूर हाथ तक नहीं लगायेगा। सम्पतसिंह जी भाण्डावत घर पर सामायिक करके बैठे हैं उस समय किसी का टेलीफोन आ जाय तो नौकर तक कह देगा कि साहब सामायिक में हैं या पूजा कर रहे हैं।

पर्वाधिराज पर्युषण के ये आठ दिन आराधना के दिन हैं। तन-धन-परिजन से ऊपर उठकर धर्म-साधना करने के दिन हैं। तन-धन-परिजन को भूलकर धर्मस्थान में जायेंगे तो आपको कुछ संतोष का अनुभव होगा।

मानव देव-देवेन्द्र से महान् है। देवता आपकी तरह से उपवास नहीं कर सकते, दया-संवर, सामायिक-स्वाध्याय नहीं कर सकते। इसीलिए आपका दर्जा देव-देवेन्द्र से ऊँचा है। देव व्रत अंगीकार नहीं कर सकते। देवता क्या देवताओं का स्वामी इन्द्र भी धार्मिक व्यक्ति की बराबरी नहीं कर सकता। 'देवा वि तं नमंसति' देवता भी धर्म-साधना करने वाले मानवों को नमस्कार करते हैं। देव श्रावक के घर उत्पन्न होने की इच्छा करते हैं।

जांकि इन्द्र करे आशंषा, षट् दर्शन हु करे प्रशंसा।
जासे ब्रह्म होय यह हंसा, सो तन पाय क्यों पाप बीज बोता।
नर तन चिन्तामणि पाय के, नर क्यों निष्फल खोता है।।

माधवमुनि जी ने मानव जीवन की महिमा गाते हुए कहा- देवताओं को जो दुर्लभ है वह धर्म की साधना, दर्शन की आराधना और चारित्र की उपासना मानव कर सकता है। इस मानव जीवन को प्राप्त करने के लिए देवता तरसते हैं कि मैं श्रावक के घर जाकर उत्पन्न होऊँ। अगर मेरी इतनी पुण्यशालिता नहीं है तो मैं श्रावक के घर दास बन जाऊँ, दास का अनुदास बन जाऊँ। क्यों, तो श्रावक के घर सहज में बहुत सारी बुराइयों से बचाव हो जाता है। श्रावक जो मर्यादा का पालन करता है वह कभी दुर्गति में नहीं जाता। पाँचवें गुणस्थान में अपयश नाम कर्म का उदय है ही नहीं। श्रावक कभी ऐसा काम नहीं करता जिससे उसको कोई अंगुली निर्देश कर सके। जिसे अंगुली बताई जाय वह श्रावक नहीं।

जिस श्रावक के भव के लिए देवता तरसते हैं, मानव आज उसकी

अपेक्षा कर कहाँ-कहाँ भटक रहा है। हमारे यहाँ चार जाति के देव माने गये हैं वे तो फिर भी देव रूप में हैं, शेष इधर-उधर के देवता देव नहीं है। अभी एक भाई बोल गया-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवतिभारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य, तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्॥

यह गीता का श्लोक है। जब-जब धर्म की हानि होती है, मैं आकर अवतार लेता हूँ। यह अवतारवाद का रूप वैष्णव परम्परा का है। एक बार भगवान् महावीर के जन्म-दिवस का प्रसंग था। एक सतीजी ने इस तरह से बोल दिया। आचार्य भगवन्त ने फरमाया कि जब-जब संकट आये तो तीर्थंकर जन्म लेते हैं, ऐसा नहीं है। यदि संकट आने पर तीर्थंकर जन्म लेते तो अभी कौनसा कम संकट है? आज हिंसा बढ़ रही है, व्यभिचार बढ़ रहा है, बुराइयाँ बढ़ रही है तो अब जन्म क्यों नहीं हो रहा है? तीर्थंकर भगवन्तों का जन्म तो निश्चित काल में जब होना होता है तब ही होता है।

श्रीकृष्ण हमारे यहाँ मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, श्लाघनीय पुरुष के नाम से हैं, वासुदेव के नाम से हैं। उन्होंने धर्म दलाली करके तीर्थंकर गोत्र का बंध कर लिया, लेकिन वर्तमान में वे वासुदेव के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने मर्यादा कायम की थी इसलिए मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। उस समय जो भी जन पीड़ित थे उनकी पीड़ा को मिटाने की कोशिश की। भगवान् मारने वाले नहीं, तारने वाले होते हैं। लोग श्रीकृष्ण को भगवान् कह देते हैं, पर वे वासुदेव थे जिन्होंने तीर्थंकर अरिष्टनेमि के शासन में धर्म की जाहोजलाली की। गौतम का अधिकार भी आपने सुना है। महापुरुषों के जीवन चरित्र सुनाने के पीछे यही कारण है कि हमारे अन्तर में कुछ शासन-सेवा की भावना जगे। हम दीक्षित होवें। दीक्षित नहीं हो सकते तो कम-से-कम जो दीक्षा ले रहे हैं उनकी अनुमोदना करें। त्याग और त्यागी के प्रति अनुमोदना का भाव जगायें। श्रीकृष्ण स्वयं दीक्षित नहीं हो सके। वे तीन खण्ड के अधिपति कह रहे हैं- धन्य है जालिकुमार, मयालिकुमार, प्रद्युम्न कुमार, मैं अधन्य हूँ, अकृत पुण्य हूँ, पुण्यहीन हूँ। छप्पन करोड़ यादवों का स्वामी जिनके पास साठ हजार दुर्दान्त सामन्त थे, साढ़े तीन करोड़ राजकुमारों का

परिवार था और इतनी ऋद्धि एवं चतुरंगी सेना होते हुए भी अपने-आपको अधन्य गिन रहे हैं और जिन्होंने दीक्षा ली- दीक्षा ले रहे हैं उनका धन्यवाद करते हैं। स्वयं दीक्षा नहीं ले सकते तब भी दूसरों को साज देकर कि जो कोई दीक्षा ले मैं उसकी सार-संभाल करूँगा। किसी का पुत्र नहीं तो मैं पुत्र की तरह सेवा करूँगा। आज कभी कोई दीक्षा में अड़चन होती है उसे दूर करने में कोई अपना सहयोग करे तो...? किसी पर कर्जा है, वह चुका नहीं सकता। यदि कोई दूसरा श्रावक उसके कर्जे को चुकाता है तो यह क्या मोल लेना हो गया? दीक्षा अंगीकार करने की जिसकी भावना है उसकी अड़चन दूर करना निर्जरा का कारण है। किसी की भावना है और उसके बच्चे छोटे हैं, उन बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा करना गलत नहीं है। श्रीकृष्ण ने जो भी दीक्षा लेने वाला था, उसके पीछे रहे परिवार की सब तरह से जवाबदारी ली।

श्रीकृष्ण श्लाघनीय पुरुष थे। श्लाघनीय पुरुष किसे कहते हैं, जानते हैं आप? आप जवाब नहीं दे रहे हैं इसका कारण है आपका स्वाध्याय नहीं है। हम जब भी छोटी-छोटी बात पूछते हैं तो आप चुप हो जाते हैं। श्लाघनीय पुरुष वह होता है जो धर्म-प्रधान, कर्म-प्रधान और भोग-प्रधान होता है। तीर्थंकर धर्मप्रधान होते हैं तो चक्रवर्ती भोगप्रधान होते हैं। चक्रवर्ती से बढ़कर भोग किसी के पास नहीं होते। कर्मप्रधान वासुदेव होते हैं। ये तीन श्रेणियाँ है, और ये श्लाघनीय पुरुष कहलाते हैं। श्लाघनीय पुरुष सब मोक्ष जाने वाली आत्माएँ होती हैं। चक्रवर्ती दीक्षा लेकर मोक्ष जाते हैं, वासुदेव तीर्थंकर गोत्र का बंध करते हैं। वे सम्यक्दर्शी होते हैं इसलिए भविष्य में मोक्ष में जाने वाले हैं। सम्यक् दर्शन जिसको हो गया वे सबके सब भवी होते हैं। श्लाघनीय पुरुष भवी होते हैं, शुक्ल पक्षी होते हैं, सम्यक्त्व वाले होते हैं भले ही नरक में हों। तीर्थंकरों के जन्म, दीक्षा, कैवल्य और निर्वाण कल्याणक पर देवता आते हैं, आठ दिन महोत्सव करते हैं। कर्म आठ हैं तो सिद्धों के गुण भी आठ हैं। आठ प्रवचन माता की आराधना करना, आठ मद छोड़ना, पर्युषण के आठ दिनों की सार्थकता है। आठवां अंग शास्त्र है अन्तगडदसा सूत्र। उसमें आठ ही वर्ग

हैं और आठ दिनों में इसकी वाचना होती है। पर्युषण पर्व के आठ दिनों में श्रावक का क्या कर्त्तव्य है उसे गाकर रखना ठीक रहेगा। गाकर नहीं कहें तो बाइयाँ कहेगी महाराज पर्युषण वांचियो इ कोनी।

ये पर्व पर्युषण आया, सब जग में आनन्द छाया रे।।
यह विषय-कषाय घटाने, यह आतम गुण विकसाने।
जिनवाणी का बल लाया रे।।

यह पर्व पर्युषण आया, सब जग में आनन्द छाया रे। सारे जगत में आनन्द छा गया। देवता भी नंदीश्वर द्वीप में जाकर भक्ति करते हैं। देवता उपवास-पौषध, सामायिक-स्वाध्याय, दया-संवर नहीं कर सकते। मोहनीय कर्म के उदय के कारण से अप्रत्याख्यानी हैं। देव सम्यक्दृष्टि तो बन सकते हैं, व्रताराधन नहीं कर सकते। वे भक्ति कर सकते हैं। भक्ति करने का उनका साधन है नाचना, कूदना, गाना, नाटक, तमाशा। श्रावक को देवताओं से इसलिए ऊँचा कहा गया है कि वह व्रताराधन कर सकता है। आप त्याग कर सकते हैं, तपस्या कर सकते हैं, ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना कर सकते हैं, साधु बन सकते हैं। दशार्णभद्र ने भक्ति बताई, पर इन्द्र ने आकर उसके गर्व को चूर कर दिया। इन्द्र ने कहा- ऐसी भक्ति तो मैं भी कर सकता हूँ। श्रावक ने जब दीक्षा की बात कही तो इन्द्र ने हार मान ली। देवता ने कह दिया कि यह ताकत मेरे में नहीं है कि मैं दीक्षा ले सकूँ। देव भी आठ दिन महोत्सव करते हैं। बाबाजी सुजानमल जी महाराज फरमाया करते-

भक्ति भगवान् की बहुत बारीक है।
शीस सौप्यां बिना मुक्ति नांही है।।

सच्ची भक्ति है त्याग में, तप में, स्वाध्याय में, संवर में। आज ज्ञानाराधना का दिन है, स्वाध्याय करने का दिन है। अज्ञान के अंधकार को हटाने का दिन है तो ज्ञान ज्योति प्रकाशित करने का दिन है। एक वैष्णव संत थे। वे फक्कड़ थे। कॉलेज के कुछ मनचले विद्यार्थियों ने उधर से निकलते महात्मा को देखा तो सोचा-चलो महात्मा से दो बातें कर लें। लड़कों ने कहा- बाबजी! दण्डवत। महाराज ने आशीर्वाद दे दिया। आगे

लड़कों ने कहा- बाबजी! यह वेष आपने कब से धारण किया? महात्मा ने कहा- मैं जब छोटा था, पाँच-छः साल का था तब से यह वेष धारण कर लिया। लड़कों ने पूछा- बाबजी! आपने कभी सिनेमा देखा? बेटा, यह क्या चीज होती है, मैंने तो कभी नाम नहीं सुना। लड़कों को कुतूहल था, बोले- चलो बाबजी आज सिनेमा देखते हैं। महाराज ने भी कहा- ठीक है चलो। महाराज मस्त थे चल दिये। जाकर हॉल में बैठ गये। वहाँ जाकर लड़कों ने कहा महाराज सामने जो पर्दा है उस पर देखते रहना। थोड़ी देर में बत्तियां बंद हुई। चलचित्र चालू हो गये। तीन घंटे तक चलता रहा। तीन घंटे बाद बाहर आये तो लड़कों ने पूछा- बाबजी! क्या देखा? महाराज ने कहा और तो कुछ समझ में नहीं आया जब अंधेरा था तब उछल कूद चल रही थी। नाच हो रहा था, गाना चल रहा है, बस यही देखा। बत्ती चालू हुई तो सब नाच कूद बंद हो गया।

यही बात है जब तक अज्ञान का अंधकार है तब तक यह नाचकूद है और ज्यों ही ज्ञान का प्रकाश हो गया तो सारी नाच-कूद बंद। यह पर्युषण पर्व आत्म ज्ञान को विकसित करने के लिए है, विषय-कषाय घटाने के लिए हैं। आप इन दिनों में यह चिन्तन करें कि हमारे कषाय कितने पतले हुए हैं?

कितनी त्याग सका पर निन्दा।
कितना अपना अन्तर देखा।।

अनन्त काल से यह जीव चार गति में रूलता आ रहा है। संसार के जीवों की सुख की आदि है, अन्त भी है पर एक सुख ऐसा है जो आता है जाता नहीं वह है अव्याबाध सुख। उस सुख के लिए यह साधना-आराधना है। जिन आत्माओं ने जन्म-जरा, मरण का अन्त कर दिया और केवली बनकर मुक्ति में चले गये उन्हीं के गुणगान गाये जाते हैं उन आत्माओं का वर्णन सुनने को मिलता है। आप-हम सब मुक्त होना चाहते हैं केवलज्ञान-केवलदर्शन पाना चाहते हैं इसीलिये ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप की आराधना की बात कही जाती है। जो भव्य जीव साधना-आराधना करेंगे वे अवश्य अपनी आत्मा का कल्याण करेंगे। ■

शोधालेख

भारतीय तंत्र-साधना और जैन धर्म-दर्शन

डॉ. सागरमल जैन

'तन्त्र' शब्द का अर्थ

जैन धर्म-दर्शन और साधना-पद्धति में तांत्रिक साधना के कौन-कौन से तत्त्व किस-किस रूप में उपस्थित हैं, यह समझने के लिए सर्वप्रथम तंत्रशब्द के अर्थ को समझना आवश्यक है। विद्वानों ने तंत्र शब्द की व्याख्याएँ और परिभाषाएँ अनेक प्रकार से की हैं उनमें से कुछ परिभाषाएँ व्युत्पत्तिपरक हैं और कुछ रूढ़ार्थक। व्युत्पति की दृष्टि से तंत्र शब्द 'तन्' + 'त्र' से बना है। 'तन्' धातु विस्तृत होने या व्यापक होने की सूचक है और 'त्र' त्राण देने या संरक्षण करने का सूचक है। इस प्रकार जो आत्मा को व्यापकता प्रदान करता है और उसकी रक्षा करता है, उसे तंत्र कहा जाता है। तान्त्रिक ग्रन्थों में 'तंत्र' शब्द की निम्न व्याख्या उपलब्ध है-

तनोति विपुलानर्थान् तत्त्वमंत्रसमन्वितान्।
त्राणं च कुरुते यस्मात् तंत्रमित्यभिधीयते॥

अर्थात् जो तत्त्व और मंत्र से समन्वित विभिन्न विषयों के विपुल ज्ञान को प्रदान करता है और उस ज्ञान के द्वारा स्वयं एवं दूसरों की रक्षा करता है, उसे तंत्र कहा जाता है। वस्तुतः तंत्र शब्द एक व्यवस्था का सूचक है जब हम तंत्र शब्द का प्रयोग राजतंत्र, प्रजातंत्र, कुलीनतंत्र आदि के रूप में करते हैं, तब वह किसी प्रशासनिक व्यवस्था का सूचक होता है।

मात्र यही नहीं, अपितु आध्यात्मिक विशुद्धि के लिए जो विशिष्ट साधना विधियाँ प्रस्तुत की जाती है, उन्हें तंत्र कहा जाता है। इस दृष्टि से 'तंत्र' शब्द एक व्यापक अर्थ का सूचक है, और इस आधार पर प्रत्येक साधना-विधि 'तंत्र' कही जा सकती है। वस्तुतः जब हम शैवतंत्र, शाक्ततंत्र, वैष्णव तंत्र, जैनतंत्र या बौद्धतंत्र की बात करते हैं, तो यहाँ तंत्र का अभिप्राय आत्मविशुद्धि या चित्तविशुद्धि की एक विशिष्ट पद्धति से ही होता है। मेरी जानकारी के अनुसार इस दृष्टि से जैन परम्परा में 'तंत्र' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग आचार्य हरिभद्र ने अपने दो ग्रन्थों-पञ्चाशक और ललितविस्तरा (आठवीं शती) में किया है। उन्होंने

पञ्चाशक में जिन आगम को और ललितविस्तरा में जैन धर्म के ही एक सम्प्रदाय को **'तंत्र'** के नाम से अभिहित किया है। आगे चलकर आगम का वाचक तंत्र शब्द किसी साधनाविधि दार्शनिकविधा का वाचक बन गया। वस्तुतः तंत्र एक दार्शनिक विधा भी है और साधनामार्ग भी। दार्शनिक विधा के रूप में उसका ज्ञानमीमांसीय एवं तत्त्वमीमांसीय पक्ष तो है ही, किन्तु इसके साथ ही उसकी अपनी एक जीवन दृष्टि भी होती है जिसके आधार पर उसकी साधना के लक्ष्य एवं साधना-विधि का निर्धारण होता है। वस्तुतः किसी भी दर्शन की जीवनदृष्टि ही एक ऐसा तत्त्व है, जो उसकी ज्ञानमीमांसा, तत्त्वमीमांसा एवं साधना विधि को निर्धारित करता है और इन्हीं सबसे मिलकर उसका दर्शन साधनातंत्र बनता है।

व्यावहारिक रूप में वे साधना पद्धतियाँ जो दीक्षा, मंत्र, यंत्र, मुद्रा, ध्यान, कुण्डलिनी, शक्ति जागरण आदि के माध्यम से व्यक्ति के पाशविक या वासनात्मक पक्ष का निवारण कर उसका आध्यात्मिक विकास करती है या उसे देवत्व के मार्ग पर आगे ले जाती है, तंत्र कही जाती है। किन्तु यह तंत्र का प्रशस्त अर्थ है और अपने इस प्रशस्त अर्थ में जैन धर्म-दर्शन को भी तंत्र कहा जा सकता है, क्योंकि उसकी अपनी एक सुव्यवस्थित, सुनियोजित साधना-विधि है, जिसके माध्यम से व्यक्ति वासनाओं और कषायों से ऊपर उठकर आध्यात्मिक विकास के मार्ग में यात्रा करता है। किन्तु तंत्र के इस प्रशस्त व्युत्पत्तिपरक अर्थ के साथ ही **'तंत्र'** शब्द का एक प्रचलित रूढ़ार्थ भी है, जिसमें सांसारिक आकांक्षाओं और विषय-वासनाओं की पूर्ति के लिए मद्य, मांस, मैथुन आदि पंच मकारों का सेवन करते हुए यन्त्र, मंत्र, पूजा, जप, होम, बलि आदि के द्वारा मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भन, विद्वेषण आदि षट्कर्मों की सिद्धि के लिए देवी-देवताओं की उपासना की जाती है और उन्हें प्रसन्न करके अपने अधीन किया जाता है। वस्तुतः इस प्रकार की साधना का लक्ष्य व्यक्ति की लौकिक वासनाओं और वैयक्तिक स्वार्थों की सिद्धि ही होता है। अपने इस प्रचलित रूढ़ार्थ में तंत्र को एक निकृष्ट कोटि की साधना-पद्धति समझा जाता है। इस कोटि की तान्त्रिक साधना बहुप्रचलित रही है, जिससे हिन्दू, बौद्ध और जैन तीनों ही साधना-विधियों पर उसका प्रभाव भी पड़ा है। फिर भी सिद्धान्ततः ऐसी तान्त्रिक साधना जैनों को कभी मान्य नहीं रही, क्योंकि वह उसकी निवृत्तिप्रधान जीवन दृष्टि और अहिंसा के सिद्धान्त के प्रतिकूल थी। यद्यपि ये निष्कृष्ट साधनाएँ तंत्र के सम्बन्ध में एक भ्रान्त अवधारणा ही है, फिर भी सामान्यजन तंत्र के सम्बन्ध में इसी धारणा का शिकार

रहा है। सामान्यतया जनसाधारण में प्राचीन काल से ही तांत्रिक साधनाओं का यही रूप अधिक प्रचलित रहा है। ऐतिहासिक एवं साहित्यिक साक्ष्य भी तंत्र के इसी स्वरूप का समर्थन करते हैं।

भोगमूलक जीवनदृष्टि और वासनोन्मुख तंत्र की इस जीवन दृष्टि के समर्थन में भी बहुत कुछ कहा गया है। कुलार्णव में कहा गया है कि सामान्यतया जिन वस्तुओं के उपयोग को पतन का कारण माना जाता है, उन्हें कौलतंत्र में महात्मा भैरव ने सिद्धि का साधन बताया है। इसी प्रकार न केवल हिन्दू तांत्रिक साधनाओं में अपितु बौद्ध परम्परा में भी प्रारम्भ से ही कठोर साधनाओं के द्वारा आत्मपीड़न की प्रवृत्तियों को उचित नहीं माना गया। भगवान् बुद्ध ने मध्यममार्ग के रूप में जैविक मूल्यों की पूर्ति हेतु भोगमय जीवन का भी जो आंशिक समर्थन किया था, वही आगे चलकर बौद्ध धर्म में वज्रयान के रूप में तांत्रिक भोगमूलक जीवनदृष्टि के विकास का कारण बना और उसमें भी निवृत्तिमय जीवन के प्रति विरोध के स्वर मुखरित हुए। चाहे बुद्ध की मूलभूत जीवनदृष्टि निवृत्तिमार्गी हो, किन्तु उनके मध्यममार्ग के आधार पर ही परवर्ती बौद्ध आचार्यों ने वज्रयान या सहजयान का विकास कर भोगमूलक जीवनदृष्टि को समर्थन देना प्रारम्भ कर दिया। गुह्यसमाज तंत्र में कहा गया है

सर्वकामोपभोगैश्च सेव्यमानैर्यथेच्छतः।
अनेन खलु योगेन लघु बुद्धत्वमाप्नुयात्॥
दुष्करैर्नियमैस्तीव्रैः सेव्यमानो न सिद्ध्यति।
सर्वकामोपभोगैस्तु सेवयंश्चाशु सिद्ध्यति॥

भोगमूलक जीवनदृष्टि के समर्थकों का तर्क यह है कि कामोपभोगों से विरत जीवन बिताने वाले साधकों में मानसिक क्षोभ उत्पन्न होते होंगे, कामभोगों की ओर उनकी इच्छा दौड़ती होगी और विनय के अनुसार वे उसे दबाते होंगे, परन्तु क्या दमनमात्र से चित्तविक्षोभ सर्वथा चला जाता होगा, दबायी हुई वृत्तियाँ जाग्रतावस्था में न सही, स्वप्नावस्था में तो अवश्य ही चित्त को मथ डालती होंगी। इन प्रमथनशील वृत्तियों को दमन करने से भी दबते न देख, अवश्य ही साधकों ने उन्हें समूल नष्ट करने के लिए संयम की जागरूक अवस्था में थोड़ा अवसर दिया कि वे भोग का भी रस ले लें, ताकि उनका सर्वथा शमन हो जाये और वासनारूप से वे हृदय के भीतर न रह सकें। अनंगवज्र ने कहा है कि चित्तक्षुब्ध होने से कभी भी सिद्धि नहीं हो सकती, अतः इस तरह बरतना चाहिए जिसमें मानसिक क्षोभ उत्पन्न

ही न हो-

तथा तथा प्रवर्तेत यथा न क्षुभ्यते मनः।
संक्षुब्धे चित्तरत्ने तु सिद्धिर्नैव कदाचन।

जब तक चित्त में कामभोगोपलिप्सा है, तब तक चित्त में क्षोभ का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि न केवल हिन्दू तांत्रिक साधनाओं में अपितु बौद्ध तांत्रिक साधना में भी किसी न किसी रूप में भोगवादी जीवनदृष्टि का समर्थन हुआ है। यद्यपि परवर्तीकाल में विकसित बौद्धों की यह भोगमूलक जीवनदृष्टि भारत में उनके अस्तित्व को ही समाप्त कर देने का कारण बनी, क्योंकि इस भोगमूलक जीवनदृष्टि को अपना लेने पर बौद्ध और हिन्दू परम्परा का अन्तर समाप्त हो गया। दूसरे, इसके परिणाम स्वरूप भिक्षुओं में भी एक चारित्रिक पतन आया। फलतः उनके प्रति जन-साधारण की आस्था समाप्त हो गयी और बौद्ध धर्म की अपनी कोई विशिष्टता नहीं बची, फलतः वह अपनी जन्मभूमि से समाप्त हो गया।

जैन धर्म में तंत्र की भोगमूलक जीवनदृष्टि का निषेध

तंत्र की इस भोगवादी जीवनदृष्टि के प्रति जैन आचार्यों का दृष्टिकोण सदैव निषेधपरक ही रहा है। वैयक्तिक भौतिक हितों एवं वासनाओं की पूर्ति के निमित्त धन, सम्पत्ति, सन्तान आदि की प्राप्ति हेतु अथवा कामवासना की पूर्ति अथवा शत्रु के विनाश के लिए की जाने वाली साधनाओं के निर्देश तो जैन आगमों में उपलब्ध हो जाते हैं, जिससे यह सिद्ध होता है कि इस प्रकार की तांत्रिक साधनाएँ प्राचीन काल में भी प्रचलित थीं, किन्तु प्राचीन जैन आचार्यों ने इसे सदैव हेय दृष्टि से देखा था और साधक के लिए ऐसी तांत्रिक साधनाओं का सर्वथा निषेध किया था। सूत्रकृताङ्गसूत्र में चौसठ प्रकार की विद्याओं के अध्ययन या साधना करने वालों के निर्देश तो हैं, किन्तु उसमें इन विद्याओं को पापश्रुत-अध्ययन कहा गया है। मात्र यही नहीं उसमें स्पष्ट रूप से यह भी कहा गया है कि जो इन विद्याओं की साधना करता है वह अनार्य है, विप्रतिपन्न है और समय आने पर मृत्यु को प्राप्त करके आसुरी और किल्विषिक योनियों को प्राप्त होता है।

पुनः उत्तराध्ययनसूत्र में कहा गया है कि जो छिद्रविद्या, स्वरविद्या, स्वप्नलक्षण, अंगविद्या आदि के द्वारा जीवन जीता है, वह भिक्षु नहीं है। इसी प्रकार दशवैकालिकसूत्र में भी स्पष्टरूप से यह कहा गया है कि मुनि नक्षत्रविद्या, निमित्तविद्या, मन्त्रविद्या और भैषज्यशास्त्र का उपदेश गृहस्थों को न करे। इससे

स्पष्ट रूप से यह फलित होता है कि वैयक्तिक वासनाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रकार की विद्याओं की साधना को जैन आचार्यों ने सदैव ही हेय दृष्टि से देखा है।

यहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि सांसारिक विषय-वासनाओं की पूर्ति के निमित्त पशुबलि देना, मद्य, मांस, मत्स्य, मैथुन और मुद्राओं का सेवन करना एवं मारण, मोहन वशीकरण आदि षट्कर्मों की साधना करके अपने क्षुद्र लौकिक स्वार्थों और वासनाओं की पूर्ति करना जैन आचार्यों को मान्य नहीं हो सका, क्योंकि यह उनकी निवृत्तिप्रधान अहिंसक जीवनदृष्टि के विरुद्ध था। किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि जैन धर्म ऐसी तान्त्रिक साधनाओं से पूर्णतः असंपृक्त रहा है। प्रथमतः विषय-वासनाओं के प्रहाण के लिए अर्थात् अपने में निहित पाशविक वृत्तियों के निराकरण के लिए मंत्र, जाप, पूजा, ध्यान आदि की साधना-विधियाँ जैन धर्म में ईस्वी सन् के पूर्व से ही विकसित हो चुकी थीं। मात्र यही नहीं परवर्ती जैनग्रन्थों में तो ऐसे भी अनेक उल्लेख मिलते हैं जहाँ धर्म और संघ की रक्षा के लिए जैन आचार्यों को तांत्रिक और मान्त्रिक प्रयोगों की अनुमति भी दी गई है। किन्तु उनका उद्देश्य लोककल्याण ही रहा है।

मात्र यही नहीं, जहाँ आचारांगसूत्र (ई.पू. पाँचवी शती) में शरीर को धुन डालने या सुखा देने की बात कही गई थी, वहीं परवर्ती आगमों और आगमिक व्याख्याओं में शरीर और जैविक मूल्यों के संरक्षण की बात कही गई। स्थानांगसूत्र में अध्ययन एवं संयम के पालन के लिए आहार के द्वारा शरीर के संरक्षण की बात कही गई। मरणसमाधि में कहा गया है कि उपवास आदि तप उसी सीमा तक करणीय है- जब तक मन में किसी प्रकार के अमंगल का चिन्तन न हो, इन्द्रियों की हानि न हो और मन, वचन तथा शरीर की प्रवृत्ति शिथिल न हो। मात्र यही नहीं, जैनाचार्यों ने अपने गुणस्थान सिद्धान्त में कषायों एवं वासनाओं के दमन को भी अनुचित मानते हुए यहाँ तक कह दिया कि उपशम श्रेणी अर्थात् वासनाओं के दमन की प्रक्रिया से आध्यात्मिक विकास की सीढ़ियाँ पर चढ़ने वाला साधक अन्ततःवहाँ से पतित हो जाता है। फिर भी जैनाचार्यों ने वासनाओं की पूर्ति का कोई मार्ग नहीं खोला। हिन्दू तांत्रिकों एवं वज्रयानी बौद्धों के विरुद्ध वे यही कहते रहे कि वासनाओं की पूर्ति से वासनाएँ शान्त नहीं होती हैं, अपितु वे घृत सिंचित अग्नि की तरह अधिक बढ़ती ही हैं। उनकी दृष्टि में वासनाओं का दमन तो अनुचित है, किन्तु उनका विवेकपूर्वक संयमन और निरसन आवश्यक है। यहाँ इस

सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा करने के पूर्व यह विचार कर लेना आवश्यक है कि सामान्यतः भारतीय धर्मों में और विशेषरूप से जैन धर्म में तांत्रिक साधना का विकास क्यों हुआ और किस क्रम में हुआ? (क्रमशः)

- निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर (म.प्र.)

खमामि सव्वजीवाणं

श्री भद्रंकर विजय जी म.सा.

नमामि सव्व जिणाणं। खमामि सव्व-जीवाणं।

शब्दार्थ- सभी जिनों को मैं नमस्कार करता हूँ, सभी जीवों से मैं क्षमायाचना करता हूँ।

भावार्थ- नमस्कार करता हूँ। अर्थात् उनके उपकार को स्वीकार करता हूँ। क्षमायाचना करता हूँ अर्थात् मेरे अपकार को स्वीकार करता हूँ।

मुझ पर हुए, हो रहे एवं होने वाले सभी उपकारियों के उपकार को मैं कृतज्ञभाव से स्वीकार करता हूँ। मुझसे हुए, हो रहे तथा होने वाले सभी अपकारों को मैं सरलभाव से स्वीकार करता हूँ एवं फिर नहीं करने के भाव से क्षमायाचना करता हूँ। बड़े से बड़ा उपकार उनका है, जो अपने जिनस्वरूप को देख रहे हैं तथा उसकी प्राप्ति तक अपने अपराधों को क्षमा कर रहे हैं। उनकी करुणा, उनकी मैत्री, उनका प्रमोद तथा उनका माध्यस्थ्य मेरे जिनस्वरूप की प्राप्ति में उपकारक है। इसलिए मैं उनकी स्तुति करता हूँ तथा मुझ में सभी जीवों के प्रति चारों भाव प्रकटित हों ऐसी प्रार्थना करता हूँ। उससे विपरीत मेरे भावों की मैं निन्दा करता हूँ, गर्हणा करता हूँ एवं सभी जीवों के समक्ष तदर्थ क्षमा माँगता हूँ। सभी जीवों के समक्ष उनके प्रति आचरित अपराधों हेतु क्षमायाचना करता हूँ। सभी जीवों के प्रच्छन्न जिनस्वरूप को देखकर उनके प्रति मैत्री, प्रमोद, कारुण्य एवं माध्यस्थ भाव को विकसित करता हूँ।

कृतज्ञता एवं परोपकार की करणीय भाव से स्वीकृति ऋणमुक्ति निष्पन्न करती है। उपकारी के प्रति कृतज्ञना का भाव तथा अपकारी के प्रति भी उपकार करने का भाव आए बिना दोनों ऋणों से मुक्ति असम्भव है। एक ऋण उपकार लेने से होता है। दूसरा ऋण अपकार करने से होता है। अतः उभय ऋण की मुक्ति हेतु नमामि तथा खमामि दोनों भावों के आराधन की समान आवश्यकता है।

-संकलन : श्री नवरतनमल डोसी

प्रासङ्गिक

जैन होने का गौरव

डॉ. दिलीप धींग

नोबेल पुरस्कार से सम्मानित विख्यात साहित्यकार जॉर्ज बर्नार्ड शॉ से महात्मा गाँधी के पौत्र देवदास गाँधी ने एक बार पूछा था- "क्या आप पुनर्जन्म को मानते हैं?"

'हाँ।' बनार्ड शॉ ने जवाब दिया। इस पर देवदास ने पूछा के यदि आपका पुनर्जन्म हो तो आप कहाँ जन्म लेना चाहेंगे। बनार्ड शॉ ने जो उत्तर दिया वह पूरी श्रमण संस्कृति को गौरवान्वित करने वाला था। उन्होंने कहा- "यदि मेरा पुनर्जन्म होता है तो मैं जैन कुल में जन्म लेना चाहूँगा। तर्कसंगत सिद्धान्तों पर आधारित यह धर्म ही है जो आत्मा को परमात्मा बनने व बनाने की प्रविधि प्रस्तुत करता है।" जो आकांक्षा यूरोप के एक महान् शाकाहारी साहित्यकार के मन में थी, वह हमें सहज सुप्राप्त है। अनन्त जन्मों के बाद असीम पुण्योदय से ऐसा गौरव मिलता है।

महज जैन कुल में जन्म लेने से ही कोई जैन नहीं हो जाता है। जैन एक आचार प्रधान धर्म है और किसी भी जाति और कुल का व्यक्ति अपने आचरण एवं जीवन व्यवहार से जैन हो सकता है। आचरण और व्यवहार को परिष्कृत करने वाले उदात्त जीवन मूल्य हमें माता-पिता तथा परिवेश द्वारा विरासत में प्राप्त हुए हैं। नियमित साधना, आप्त वचनों का स्वाध्याय, जिनवाणी श्रवण तथा व्यवहार में पवित्रता द्वारा इसे पल्लवित और विकसित करना हमारे पुरुषार्थ पर निर्भर है।

आबादी की दृष्टि से जैन इस दुनिया में थोड़े हैं। लेकिन जितने हैं, उनकी एक अलग पहचान और साख है। समग्र रूप से देखा जाए तो सदाचरण, गुणवत्ता और श्रेष्ठता में जैन अव्वल हैं। जैन समाज संसार में सबसे शान्तिप्रिय, संयमित, समर्थ और अनुशासित समुदाय है। इसकी वजह इसके अनुकरणीय जीवन निर्माणकारी आदर्श हैं।

जैन धर्म के आदर्श पूरी दुनिया में सुख-शान्ति और समृद्धि की स्थापना करने वाले हैं। पर्यावरण असन्तुलन, असहिष्णुता, युद्ध और आतंक से जूझती दुनिया को बचाने के लिए उनके महान् आदर्शों के मंगल पथ पर चलना और संसार को ऐसा पावन-पथ दिखलाना आवश्यक है। दूसरों का पथ प्रदर्शक वही बन

सकता है जो स्वयं उस पथ का अनुगामी हो। संसार के जिन व्यक्तियों और समुदायों ने भगवान् के आदर्शों को अपनाया है, उन व्यक्तियों व समुदायों ने उल्लेखनीय प्रगति की है। जैन समाज की प्रगति की पृष्ठभूमि में भगवान् महावीर के आदर्श ही हैं। यह समाज बहुत ही स्वाभिमानी है। जैन धर्म के निम्न सिद्धान्तों की वजह से हमें जैन होने का गौरव होना चाहिये-

अहिंसा : अहिंसा जैन धर्म का सर्वोपरि सिद्धान्त है। जितनी गहराई से अहिंसा की व्याख्या जैन आगमों में प्राप्त होती है, उतनी विश्व के किसी भी साहित्य में नहीं मिलती है। यही वजह है कि अहिंसा और जैन धर्म/ समाज एक दूसरे के पर्याय हो गये। श्रीमद् राजचन्द्र द्वारा जैन धर्म की विरासत से प्राप्त सत्य और अहिंसा की अतुलनीय ताकत से ही महात्मा गाँधी ने विश्व के सबसे बड़े गणतन्त्र के स्वाधीनता आन्दोलन का नेतृत्व किया तथा अहिंसा के राजनीतिक संस्करण दुनिया के सामने रखकर वे अमर हो गये। अहिंसा का पालन करने के फलस्वरूप ही आज जैन समाज सबसे शान्तिप्रिय समाज माना जाता है। पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने कहा था कि जैन समाज के लिए पुलिस बल की आवश्यकता नहीं पड़ती है। दुनिया में आज आतंकवाद, पर्यावरण-प्रदूषण, निर्धनता जैसी अनेक समस्याओं के निराकरण के लिए अहिंसा एक निरापद उपाय माना जाने लगा है।

सत्य : जैन धर्म के मुख्य पाँच व्रतों में सत्य द्वितीय क्रम पर है। सत्यवादी झूठ और छल-कपट से दूर रहता है, इसलिए वह सबका विश्वासपात्र बनता है। समाज में समता और न्याय की स्थापना के लिए सत्य की प्रतिष्ठा बहुत जरूरी है। सत्य के प्रयोग से आर्थिक उपनिवेश खड़ा करने वालों की कुटिल चालों को विफल किया जा सकता है। जैन समाज की साख के पीछे सत्यव्रत ही मुख्य है। किसी समय अदालतों में जैन श्रावक की साक्षी को पत्थर की लकीर माना जाता था। प्रश्नव्याकरण सूत्र में सत्य को भगवान कहा गया है- 'तं सच्चं खु भगवं'। इस दृष्टि से सत्य का स्वरूप वाणी के सत्य से कई गुना विराट् बन जाता है। जीव और जगत का अस्तित्व सत्य पर अवलम्बित है। गाँधीजी ने अहिंसा को साधन तो सत्य को साध्य माना।

अचौर्य : जीवन में सर्वत्र प्रामाणिकता के लिए अचौर्य की साधना बहुत जरूरी है। भगवान् महावीर ने चोरी (अदत्तादान) को अपयशकारी और अनार्य कहा है। जैन समाज पुरुषार्थी समाज है। देश के अर्थतन्त्र की नींव माना जाने वाला यह समाज

अपने परिश्रम और प्रतिभा के बल पर आगे बढ़ा है। देश के विकास में इस समाज का विशिष्ट योगदान है। जैन समाज आनुपातिक रूप से देश में सबसे अधिक कर (टैक्स) देने वाला समाज है। भ्रष्टाचार की समस्या के निवारण के लिए अस्तेय का पाथेय आवश्यक है। यह व्रत संकल्प, सम्मान और स्वावलम्बन जैसे मूल्यों को जीवन्त बनाता है।

अपरिग्रह : अपरिग्रह के महान् आदर्श का पालन करने में जैन समाज अव्वल है। अपने पुरुषार्थ और योग्यता के बल पर यह समाज खूब कमाता है और जब जहाँ जरूरत पड़ती है, वहाँ भामाशाह बनकर मुक्त हस्त से दान भी करता है। आज देश में शिक्षा, चिकित्सा, सेवा और साधना की हजारों पारमार्थिक संस्थाएँ चल रही हैं, उनके संचालन में जैन समाज का सर्वाधिक योगदान है। गौतम स्वामी के एक प्रश्न के उत्तर में भगवान महावीर ने कहा था- **जे गिलाणं परियरइ से मं दंसणेण पडिवज्जइ** अर्थात् जिसने ग्लान एवं दीन दुखियों के कष्टों को जाना है, उसी ने मेरे दर्शन को पहचाना है। भगवान् महावीर के सेवा और अपरिग्रह के आदर्श को जैन समाज ने व्यापक रूप से अपनाया है।

भारत के पूर्व न्यायाधीश रंगनाथ मिश्र ने कहा था कि "मेरी यह मान्यता है कि सेवा, शिक्षा, दान, संस्कार-निर्माण आदि का शुभकार्य कोई संस्था करने जा रही है तो उसके पीछे किसी-न-किसी जैन बन्धु की प्रेरणा, सहयोग व संयोजन है।" पूर्व राष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा ने एक बार कहा था कि जैन समाज के आर्थिक सहयोग के बगैर देश का आजादी का आन्दोलन अधूरा ही रहता।

ब्रह्मचर्य और सदाचार : समाज में सदाचार की स्थापना के लिए ब्रह्मचर्य आवश्यक है। जैन साधु-साध्वी जहाँ पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हैं, वहीं जैन गृहस्थ शील-व्रत अंगीकार करके इस महान् व्रत की आराधना करते हैं। सदाचार की वजह से ही जैन समाज एक कुलीन और उच्च समाज माना जाता है। जैन समाज में ब्रह्मचर्य का इतना महत्त्व रहा कि उसके अनुपालन के आधार पर जैन समाज की जनसंख्या और जनसंख्या वृद्धि दर कम रही है। जबकि जैन समाज की साक्षरता दर देश में सर्वाधिक है।

महज कृत्रिम साधनों के आधार पर परिवार नियोजन कार्यक्रम चलाने वालों को आत्म-संयम के महत्त्व को भी प्रचारित करना चाहिये। यह कार्य देश के यौवन और ऊर्जा को रचनात्मक दिशा की ओर ले जाने वाला साबित होगा।

आत्म-संयम से आबादी-नियंत्रण के साथ ही अनेक प्रकार के अपराधों व बुराइयों पर सहज रूप से नियंत्रण संभव है। जैन समाज में नाता प्रथा की अनुपस्थिति, उत्तेजक आहार का निषेध आदि अनेक बातें ऐसी हैं, जिनसे ब्रह्मचर्य के प्रति निष्ठा अभिव्यक्त होती है। एड्स जैसे रोगों से जैन समाज कोसों दूर है, यह उसके सदाचार का सुपरिणाम है।

अनेकान्त : अनेकान्त का सिद्धान्त (स्याद्वाद) भगवान महावीर की पूरे संसार को अनुपम देन है। यह सिद्धान्त एकता, समन्वय और सहिष्णुता की स्थापना करता है। दुनिया के सारे झगड़ों को मिटाने में यह सिद्धान्त पूर्ण सक्षम है। मनीषियों ने डॉ. अलबर्ट आइंस्टीन के सापेक्षता के सिद्धान्त को अनेकान्त का वैज्ञानिक संस्करण माना है। विज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति सहित सभी क्षेत्रों में आज अनेकान्त का व्यापक उपयोग व प्रयोग हो रहा है। आचार्य सिद्धसेन दिवाकर ने कहा था-

जेण विणा लोगस्स वि ववहारो सव्वथा न निव्वडई।
तस्स भुवणेक्कगुरुणो, नमो अणेगंतवायस्स॥

अर्थात् जिसके बगैर किसी भी प्रकार का लोक व्यवहार नहीं निभ सकता, उस तीन भुवन के गुरु अनेकान्तवाद को मैं नमस्कार करता हूँ। ऐसे मौलिक व उपयोगी सिद्धान्त के प्रतिपादक जैन धर्म पर भला किसे गौरव नहीं होगा।

व्यसनमुक्ति और शाकाहार : भगवान् महावीर के समय में धर्म के नाम पर पशु-बलि होती थी। करुणा के महासागर प्रभु महावीर ने पशु-बलि नहीं करने और मांसाहार का त्याग करने का उपदेश दिया। पंचेन्द्रिय-वध और मांसाहार को उन्होंने नरक गति का मुख्य कारण बताया। वर्तमान में अहिंसा, शाकाहार और व्यसनमुक्ति के प्रचार-प्रसार में जैन धर्म और समाज के द्वारा उल्लेखनीय कार्य किये जा रहे हैं। शाकाहार का परचम आज पूरी दुनिया में फहरा रहा है, इसमें जैन धर्मानुयायियों का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

जैन होने की पहली शर्त सात व्यसनों (मांसाहार, मदिरापान, शिकार, परस्त्री गमन, वेश्यागमन, चोरी और जुआ) से मुक्त रहना है। कोई जैन समाज के बारे में कितनी ही नकारात्मक बातें करे, लेकिन व्यसनमुक्ति, सदाचार और शाकाहार के आदर्शों के अनुपालन में यह समाज अव्वल है। व्यसनमुक्त होने की वजह से ही यह समाज सम्पन्न है तथा बुद्धि, कौशल, व्यापार, वाणिज्य, प्रबन्ध,

नेतृत्व आदि में अग्रणी है।

अन्य आदर्श : मानव, मानवता और दुनिया की भलाई के लिए भगवान् महावीर ने अनेक आदर्श दुनिया के समक्ष रखे। जैन समाज में सभी आदर्शों का किसी न किसी रूप में आज भी पालन किया जाता है। जैसे-तपस्या का आदर्श। तप के आदर्श में जैन समाज सबसे आगे हैं। जैन साधु-साध्वी और श्रावक-श्राविकाएँ आज भी ऐसी दीर्घ व कठिन तप की आराधना करते हैं कि दूसरे समुदाय वाले आश्चर्य करते हैं। रात्रि-भोजन-निषेध भगवान् महावीर की एक और विशिष्ट देन हैं। रात्रि-भोजन का त्याग स्वास्थ्य, संयम और अनेक दृष्टियों से बेहद हितकर सिद्ध हुआ है। जैन समाज में रात्रि भोजन त्यागियों की संख्या कम हुई तो अपनी इस पहचान को बनाए रखने के लिए साधु-साध्वी और समाजवेत्ता निरन्तर प्रयासरत हैं। विनय और अनुशासन में भी जैन समाज अग्रणी है। भगवान् महावीर के महान् आदर्शों की बदौलत ही जैन समाज श्रेष्ठ और सर्वश्रेष्ठ समाज है। हमें जैन होने पर सात्त्विक गौरव होना चाहिये।

इन आदर्शों के अलावा भी अन्य अनेक कारण हैं जिनकी वजह से हमें जैन होने का गौरव होना चाहिये। ऐसे कुछ कारणों की चर्चा भी यहाँ समीचीन होगी।

विश्व का प्राचीनतम धर्म : यूं तो जैन धर्म अनादि अनन्त शाश्वत धर्म है। अनन्त चौबीसियों की अवधारणा यहाँ विद्यमान है। लेकिन काल की दृष्टि से भी यह विश्व का सबसे प्राचीन धर्म है। इस दृष्टि से मेरी ये काव्य पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं-

है शाश्वत अनादि-अनन्त, यह जैन धर्म गौरवशाली।
उत्थान पतन है स्वाभाविक, लेकिन सिक्का है टकसाली।।
असंख्य-असंख्य वर्ष पहले, प्रभु ऋषभ का वर्चस्व था।
इस काल की दृष्टि से यह प्राचीनतम है विश्व का।।
स्याद्वाद अहिंसा सत्य की, हरी-भरी गहरी जड़ें हैं।
अक्षुण्ण हैं मौलिकताएँ क्योंकि, संख्या से सिद्धान्त बड़े हैं।।

प्राचीनतम होने की वजह से विश्व के सभी धर्मों पर जैन धर्म का किसी न किसी रूप में प्रभाव पड़ा है। विद्वानों के अनुसार गौतम बुद्ध पहले भगवान पार्श्वनाथ की श्रमण परम्परा में ही दीक्षित हुए थे। इसके अलावा जैन धर्म के प्रथम

तीर्थंकर आदिनाथ भगवान् ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र चक्रवर्ती भरत के नाम से ही हमारे देश का नाम भारत हुआ। यह हमारे लिए अत्यन्त गौरव की बात है।

समृद्ध साहित्य : किसी भी परम्परा का आधार उसका साहित्य होता है। जैन धर्म का आगम साहित्य करीब ढाई-तीन हजार वर्ष पुराना है। उससे भी पूर्व उपनिषद् साहित्य पर 23वें तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का स्पष्ट प्रभाव विद्वान मानते हैं। श्वेताम्बर परम्परा के पास 32 और 45 आगमों तथा दिगम्बर परम्परा के पास 84 आगमों का विशाल प्राकृत साहित्य है। आगमों की भाषा प्राकृत को वेदों से भी प्राचीन माना जाता है तथा कुछ विद्वानों के मत में संस्कृत का आधार भी प्राकृत ही रही है। प्राचीन शिलालेखीय साहित्य भी सर्वाधिक परिमाण में प्राकृत में उपलब्ध है। उड़ीसा के हाथीगुंफा शिलालेख में भारत के लिए 'भारतवर्ष' शब्द का प्रथम शिलालेखीय प्रयोग हुआ। प्राकृत ही अपभ्रंश हुई और परिवर्तित होते हुए उसने आधुनिक भारतीय भाषाओं का रूप ले लिया। इनके अलावा प्राकृत व संस्कृत में निर्युक्ति, चूर्णि और व्याख्या साहित्य तथा आधुनिक भाषाओं में प्राप्त विपुल साहित्य को मिला दें तो वह अपरिमित है। जैन साहित्य विश्व साहित्य की अनमोल निधि है। इसमें सभी विधाएँ, विद्याएँ और विषय समाविष्ट हैं। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि कम्प्यूटर के आविष्कार में जैन ग्रंथ भी आधार बने थे।

विपुल सांस्कृतिक वैभव : भारतीय संस्कृति के विकास में जैन धर्म का महत्त्वपूर्ण योगदान है। जैन धर्म का विपुल और विविध सांस्कृतिक वैभव देश में यत्र, तत्र सर्वत्र फैला हुआ है। जन-जन की आस्था के केन्द्र जैन तीर्थ स्थल, बेजोड़, वास्तु और शिल्प के लिए प्रसिद्ध मन्दिर और अध्यात्म, योग व उत्कृष्ट कला को अभिव्यक्त करतीं मूर्तियाँ इस देश की अनुपम धरोहर हैं। इस अनमोल विरासत पर पूरी दुनिया मुग्ध है। विश्व की कई संस्कृतियाँ जैन संस्कृति से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित हुई हैं।

महापुरुषों का समाज : जैन समाज में अनेकानेक महापुरुषों ने जन्म लिया है तथा जैन धर्म के पावन स्पर्श से अनेक महापुरुष दुनिया को प्राप्त हुए हैं। जैन धर्म के पावन स्पर्श से महात्मा गांधी जैसे व्यक्ति दुनिया को मिले। वहीं जैन समाज में ही समय-समय पर सभी क्षेत्रों में अनेकानेक विशिष्ट व्यक्ति हुए हैं, जिनकीं सेवाओं से समाज, देश और मानवता का बड़ा उपकार हुआ। भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन में राजस्थान का प्रथम स्वतंत्रता सेनानी शहीद अमरचन्द बांठिया भगवान् महावीर

का ही सच्चा वीर भक्त था। इतिहास के पन्नों पर सभी क्षेत्र के व्यक्तियों की सूची बहुत लम्बी है। राजा कुमारपाल, दानवीर भामाशाह और जगडूशाह, वैज्ञानिक विक्रम साराभाई और डॉ. डी.एस. कोठारी जैसे अनेक व्यक्तियों ने अपने समय और समाज को प्रभावित किया। महान् त्यागी सन्त मुनिराज और श्रावक तो हर कालखण्ड में अगणित संख्या में हुए हैं तथा वर्तमान में भी हैं।

वैज्ञानिक सिद्धान्त : जैन धर्म एक सर्वतंत्र स्वतन्त्र धर्म है। इसका अपना मौलिक और वैज्ञानिक दर्शन है। इसी पर सम्पूर्ण जैनाचार का भव्य प्रासाद खड़ा है। आत्म स्वातंत्र्य और मनुष्यत्व की प्रतिष्ठा करके जैन दर्शन ने तमाम अंधविश्वासों को दरकिनार कर दिया। जैन दर्शन की यात्रा स्वर्ग से आगे मोक्ष और योग से भी आगे अयोग तक होती है। जीव और जगत के अस्तित्व को लेकर जैन दर्शन एकदम वैज्ञानिक बात करता है। इस सृष्टि को किसी ईश्वर द्वारा निर्मित मानने की बजाय वह कहता है कि यह अनादि अनन्त है। उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से यह निरन्तर गतिमान है। छह द्रव्य (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और काल) इसकी स्थिति और गति को बनाए रखते हैं। जैन जीवन शैली आरोग्यदायिनी, सुखप्रदायिनी और उद्देश्यपरक है। वह सबको जीने की उत्तम कला सिखाती है। नौ तत्त्वों (जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, बंध, निर्जरा और मोक्ष) के समझने से जन्म से मोक्ष तक की यात्रा की तर्कसंगत व आचरणीय राह प्रशस्त होती है।

आडम्बर-मुक्त उपासना पद्धतियों तथा संयममय जीवन शैली की वजह से जैन समाज आज भी शिष्ट और विशिष्ट बना हुआ है। हमें सकारात्मक दृष्टिकोण रखते हुए आगे बढ़ना होगा। तीर्थंकर भगवान् के आदर्शों का पालन करते हुए समय के साथ कदम मिलाते हुए हम आगे बढ़ने का संकल्प लें। संसार की समस्त समस्याओं का समाधान जैन धर्म के शाश्वत सिद्धान्तों से किया जा सकता है। आज दुनिया को जैनत्व की बहुत जरूरत है, परन्तु दुनिया जैनत्व में एकत्व देखना चाहती है। हम एक बनें, नेक बनें और अपने उत्तम आचरण के द्वारा दुनिया में जैन धर्म और भगवान् महावीर के अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह आदि महान् आदर्शों का बिगुल बजाएँ। यदि ऐसा करेंगे तो हमारे जैन होने का गौरव बहुगुणित हो जाएगा।

- 53, डोरे नगर, उदयपुर-313002 (राज.)

चिन्तन

क्रोध का एक प्रमुख कारण : असहिष्णुता

श्री चाँदमल बाबेल

क्रोध सहनशीलता के अभाव में आता है। जब व्यक्ति के अनुकूल न होकर प्रतिकूल विचार एवं कार्य होता है, तब क्रोध आता है। ऐसे अवसर पर व्यक्ति अनेकान्त एवं स्याद्वाद के सिद्धान्त को भूल जाता है। वह विचार नहीं करता है कि किसी अपेक्षा से अन्य के विचार एवं कार्य उचित भी हो सकते हैं। वह "मित्ती मे सव्वभूएसु" सिद्धान्त विस्मृत कर देता है। आचरण में नहीं ला पाता है। यही तो जीवन की एक विडम्बना है।

एक बार रूस के दार्शनिक तुर्गनेव कहीं जा रहे थे। राह में एक वृद्ध भिखारी से भेंट हो गई। भिखारी भूखा और फटे हाल था, किन्तु आंखों में उसके अद्‌भुत चमक थी। तुर्गनेव के पास आकर बोला-"कुछ देंगे"? तुर्गनेव का अंतस् आर्जवी था, जो कुछ होता, तुरन्त दे देते थे। उस दिन उनकी जेब खाली थी। वे दुःखी हुए और सोच में पड़ गये कि क्या करें? आखिर भिखारी का हाथ थामते हुए तुर्गनेव बोले- "भाई मेरे! 'मैं' बहुत शर्मिंदा हूँ- एक भी पैसा आज नहीं है मेरे पास। दूँ तो क्या दूँ?" वृद्ध भिखारी अनुभव के वातायन से झांकते हुए बोला- "महाशय आप दुःखी न हों, पैसा नहीं तो न सही, लेकिन मुझे अनमोल वस्तु मिल गयी है।" तुर्गनेव आश्चर्य में पड़ गये और पूछा- 'वह क्या?' भिखारी बोला "हृदय की सच्ची सहानुभूति"। यह सुनकर तुर्गनेव की सत्य भरी आँखें तरल हो गयी।

इस प्रकार हर प्राणी के प्रति सहानुभूति बन जावे तो स्नेह प्रेम का वातावरण बन जाता है। मन में क्रोध के कभी भाव ही नहीं बन पाते हैं। लेकिन आज व्यक्ति में असहिष्णुता का प्रसार इतना बढ़ गया है, जिसको शब्दों में लिखना दुष्कर है। अनेक ऐसे व्यक्ति भी मिल जायेंगे जिनका हृदय उपदेश देने पर भी मधुरता प्राप्त नहीं करता है। जिसका जो स्वभाव है वह उसे कभी छोड़ना ही नहीं चाहता है। कुत्ते को राजसिंहासन पर बिठा दिया जाय तो वह जूतियां चबाना नहीं छोड़ेगा। कुत्ते की पूँछ नलिका में रहकर भी सीधी नहीं हो पाती है।

यदि इन्सान 'जल' बनकर जीता है तो वह दूसरों के दिलों में स्थान बना

लेता है। जो 'ज्वाला' बनकर जीता है वह परिवार, समाज, देश के लिए अभिशाप स्वरूप सिद्ध होता है। जल जिधर भी जाता है, आस-पास की भूमि को सुरम्य और सरसब्ज बनाता है और ज्वाला जिधर भी फैलती है वहाँ पर अपना नग्न ताण्डव दिखाये बिना नहीं रहती है।

असहिष्णुता : मानसिक एवं वैचारिक

व्यक्ति के मन का पता लगाना बड़ा कठिन है। वह मन में क्या भाव रखता है? क्या उथल-पुथल चल रही है? यह केवल मनःपर्यायज्ञानी का विषय है। आज व्यक्ति ऐसा चालाक बन गया है कि उसके मन के भावों को चेहरे पर भी नहीं आने देता है। मन इन्द्रियों से ऊपर है। सारा मानसिक क्रिया कलाप मन के द्वारा ही सम्पन्न होता है। मन में यदि गलत कार्य के प्रति डरऔर हर प्राणी के प्रति सहनशीलता आ जावे तो सारी गुत्थियाँ सुलझ जाती हैं। क्रोध का आवेग सबसे पहले यहीं से प्रस्फुटित होता है, अतः मन को सहनशील बनाना अति आवश्यक है। किसी विचारक ने उचित ही कहा है-

मन ढोंगी, मन धूर्त है, मन मैंगल मस्तान।
मन सुधरे तो मित्र है, नहीं तो शत्रु समान।।

व्यक्ति के विचार इतने कुत्सित एवं विकृत बन जाते हैं कि वह हमेशा दूसरों को परेशान एवं दुःखी देखना चाहता है, इसी में आनन्द की अनुभूति करता है। वह इन्हीं विचारों में डूबा रहता है कि अमुक के जीवन में कष्ट एवं दुःख का अवसर आवे, वह तन-मन-धन से दुःखी बन जावे। एक विचारक को रात में एक स्वप्न आया कि उसके सामने एक फरिश्ता खड़ा था। उसने कहा- "तुम्हारी क्या इच्छा है? कुछ मांगो, मैं कुछ देना चाहता हूँ।" विचारक बोला- "एक आलीशान बंगला बना दो।" फरिश्ते ने 'तथास्तु' कहा- बंगला नज़र आने लगा। फिर फरिश्ते ने कहा- "और क्या चाहते हो?" विचारक बोला- "बंगले के चारों ओर एक सुन्दर विशाल बगीचा एवं बड़े-बड़े छायादार वृक्ष हों।" फरिश्ते ने 'तथास्तु' कहा कि विशाल वृक्ष नज़र आने लगे। फरिश्ता फिर बोला और माँगो। तब विचारक बोला मेरे आसपास के लोगों को वृक्षों पर लटका दो, मैं सबको लटके देखना चाहता हूँ। इतना कहते ही स्वप्न टूट गया। विचारक बड़ा हैरान हो गया। मुझे लोग उच्च विचारक मानते हैं। बड़ा सम्मान करते हैं। मेरे मन में ऐसे बुरे विचार कैसे बने? ऐसे अनेक व्यक्तियों के विचारों में कालुष्य छिपा है, अनुचित विचार दबे पड़े हैं। वे कभी भी उभर कर आ सकते हैं। इन सबका कारण

हमारे में सहिष्णुता का अभाव है। मन कभी ऊर्ध्वमुखी तो, कभी अधोमुखी भी होता है। कभी शुभ में होता है तो कभी अशुभ में भी । विचारों को शुभ बनाना चाहिये।

परगुण एवं पर उन्नति के प्रति असहिष्णुता :

व्यक्ति दूसरों की उन्नति देखता है, उसके वैभव को, उसके पद को, उसके प्रभाव को, उसकी साधना एवं ज्ञान को देखता है, तो उसके मन में आंतरिक व्यथा उत्पन्न हो जाती है। वह उसकी उन्नति में अवरोध डालने की सोचता है, उसको लांछित करने की चेष्टा करता है। इस प्रकार व्यक्ति में क्रोध के भाव बनते रहते हैं। निश्चयात्मक स्थिति तो यह है कि वह उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता है, किन्तु स्वगुणों को छिन्न-भिन्न करता है। जब राजा अशोक ने कुणाल के लिए एक आदेश लिखा- ''शीघ्रमधीयतां कुमारः'' कुमार को शीघ्र अध्ययन कराया जाए, लिखकर रख दिया था। अशोक की अनुपस्थिति में उस पड़े आदेश को कुणाल की सौतेली मां ने पढ़ा एवं 'शीघ्रम' के ऊपर अनुस्वार लगा दिया, यथा- 'शीध्रमंधीयतां कुमारः', जिसका अर्थ निकलता है, कुमार शीघ्र अन्धे किए जाए। पिता के आदेश को पढ़कर कुणाल अपनी आँखों में शलाका डालकर अन्धा बन गया। अशोक ने जब यह बात जानी तो बहुत दुःख हुआ, किन्तु कुणाल की विमाता तो उसकी उन्नति नहीं देखना चाहती थी, अतः इस प्रकार की स्थिति बनी।

व्यक्ति की जब इच्छाओं की पूर्ति नहीं हो पाती है तब भी क्रोध की स्थिति बन जाया करती है। वह सोचता है कि मेरे पास वैभव क्यों नहीं है? मेरे पास दूसरों के मुकाबले में कार, बंगला, रूपया, पैसा, जमीन, जायदाद क्यों नहीं है? मेरी समाज में इज्जत क्यों नहीं है? मैं उच्च पदों पर क्यों नहीं हूँ? मेरे परिवार में वृद्धि क्यों नहीं है? इन इच्छाओं के कारण क्रोध की स्थिति बन जाया करती है। ऐसे समय में उन्नति के इच्छुक को चिन्तन करना चाहिये कि मेरे में इतनी क्षमता है या नहीं ? यदि क्षमता नहीं तो क्षमता पैदा करने का प्रयास करना चाहिये, पुरुषार्थ करना चाहिये। यदि पुरुषार्थ के बाद भी सफलता नहीं मिलती है तो समझना चाहिये कि अन्तराय कर्म बाधक है। ऐसा चिन्तन करने पर क्रोध की स्थिति को कम किया जा सकता है।

वाणी संबंधी असहिष्णुता :

कभी-कभी व्यक्ति विवेक के अभाव में कटुता एवं क्लेश का वातावरण

पैदा कर देता है। वाणी एक शस्त्र के समान है उचित तरीके से प्रयुक्त हो तो किसी को मित्र तथा अनुचित ढ़ग से प्रयुक्त हो तो शत्रु बना देती है। अनुचित ढ़ंग में क्रोध छिपा रहता है। असहिष्णुता छिपी रहती है। ऐसे समय में विवेक लुप्त हो जाता है। क्रोध में व्यक्ति अशुभ कर्मों का संचय करता है। अतः 'नापुट्ठो वागरे किंचि' बिना पूछे कुछ न बोले तथा नपी तुली, संयमित, संतुलित, समतायुक्त वाणी का प्रयोग हो। विषमता की स्थिति आने पर अपने आप को नियंत्रित रखे। अनुचितवाणी से बचने का प्रयास करे।

फौलाद बनने के लिए, लोहे को पिघलाना पड़ता है।
जग को रोशन करने के लिए, दीपक को जलना पड़ता है।।
बन्धुओं! कुछ बनने के लिए, बहुत कुछ सहना पड़ता है।
होठों तक आयी बात को भी कभी निगलना पड़ता है।।

शारीरिक असहिष्णुता:

साधक हमेशा तन्मयता के साथ स्वाध्याय, ध्यान एवं प्रभुस्मरण में लगा रहता है। किन्तु जब मच्छर डंक मारता है, गर्म सर्द हवा का झोंका आता है, शारीरिक रोग व पीड़ा उत्पन्न होती है, तब साधक की साधना में चलायमान की स्थिति बन जाया करती है। यही शारीरिक असहिष्णुता है। शारीरिक वेदना होती है तो आवेश की स्थिति बन जाया करती है। ऐसे अवसर पर समभाव रखना जरूरी होता है। धैर्य, सहनशीलता, दृढ़ता नहीं रख पाने पर साधना निष्फल हो जाती है। ऐसे अवसरों पर विकृति एवं विकार आते हैं। कभी-कभी तो साधना की निरन्तरता में भी मन में शैथिल्य आ जाता है। परेशानी एवं कष्ट की स्थिति में अधःपतन एवं दुर्गति की स्थिति बन जाती है। अतः मन रूपी योद्धा के लिए सद्विचार रूपी ढाल सुदृढ़ होना चाहिये।

क्रोध शमन हेतु साधक को हर स्थिति में सहनशील बनना चाहिए। साधना की सफलता इसी में है।

क्षमा, तितिक्षा, सहनशीलता, में ही करुणा की रस धारा।
आ जाये यदि मानव मन पर, तो धुल जाये कलिमल सारा।।
तप करना हो, जप करना हो, कुछ भी करना हो कर लेना।
किन्तु हृदय की सहनशीलता को, नष्ट कभी मत होने देना।।

क्रोध-नियन्त्रण :

क्रोध विजय के कतिपय सूत्र इस प्रकार हैं-

1. क्रोध और आवेश हो तो निर्णय कुछ घण्टे टाल दिया जाय।
2. क्षमा तत्काल कर दें।
3. तत्काल बैठकर ठंड़ा पानी पीएँ।
4. भाषा का प्रयोग सोच-विचार कर करें।
5. स्वयं आगे होकर क्षमा मांग लें तथा सामने वाले को क्षमा कर दें।

क्रोध के परिणाम बहुत भयानक होते हैं। आज हम इसी परिणाम के कारण चतुर्विध संसार में परिभ्रमण कर रहे हैं। क्रोध पर नियंत्रण जिसने भी किया उसी ने अपने जीवन को उच्च श्रेणी पर पहुँचाया है।

-4- महावीर कॉलोनी, चित्तौड़ (राजस्थान)

भ्रूण-हत्या : एक अभिशाप

डॉ. प्रतिभा जैन

भ्रूण-हत्या के कारण स्त्रियों के पैदा ही नहीं हो पाने से लिंगानुपात बिगड़ता जा रहा है तथा पुरुषों की मनःस्थिति जैसी होती जा रही है, स्त्रियाँ स्वयं ही इसके लिए जिम्मेदार हैं। विडम्बना है **Missing Girls** (लापता लड़कियाँ जो पैदा ही नहीं हो पाती हैं) शिक्षित लोगों में अधिक हैं। जैन समुदाय में शिक्षित महिलाओं की औसत संख्या 90% के लगभग है तथा गरीबी का अनुपात सबसे कम है, फिर भी जैन समुदाय में भ्रूण हत्या! सोचनीय है। भ्रूण हत्या का कारण एक विवाह आदि में होने वाला खर्च है। यदि समाज परिग्रह, प्रदर्शन व वासना से दूर नहीं होगा तो जो साधन सम्पन्न नहीं है, उनमें भ्रूण हत्या का साहस उत्पन्न होगा। अहिंसा प्रधान जैन धर्म में, कन्या के भ्रूण की हत्या! कितना घिनौना अपराध है! लड़के की चाह में तकनीकी से लड़की का पता लगते ही उसे गिरा देते हैं। गाँवों में ऐसे जघन्य अपराध अपेक्षाकृत कम होते हैं। नारी वात्सल्य की साक्षात् मूर्ति है, उसके रोम-रोम में संतान के प्रति प्रेम का झरना बहता रहता है। फिर भी कन्या के भ्रूण की हत्या! नारी सचेत हो, आगामी पीढ़ी को स्वस्थ बनाये, उसका हर कदम सावधानी के साथ मर्यादा और गरिमामय हो। जैन समाज के गौरवमय निर्माण में यह अत्यन्त आवश्यक है।

-पूर्व प्रिंसिपल, महारानी गर्ल्स कॉलेज, जयपुर (राज.)
द्वारा आध्यात्मिक चेतना शिविर में व्यक्त विचार

प्रासङ्गिक

मित्ती मे सव्वभूएसु

पं. शान्तिप्रकाश सत्यदास

"मित्ती मे सव्व भूएसु" अर्थात् मेरी समस्त प्राणियों के साथ मित्रता है- यह संदेश कितना व्यापक, कितना उदार और कितना उपयोगी है, इसे बताने की आवश्यकता नहीं। जो जैन धर्म को एकान्त निवृत्ति का प्रेरक मान कर उसकी आये दिन आलोचना करते रहने में अपनी बुद्धिमत्ता खर्च करते हैं, उन्हें यह पंक्ति ध्यान से पढ़नी चाहिए। आशा की जा सकती है कि इससे उनका भ्रम अवश्य दूर हो जाएगा।

शत्रुता न रखना निवृत्ति है और मित्रता करना प्रवृत्ति। ठीक वैसे ही जैसे झूठ न बोलना निवृत्ति है और सच बोलना प्रवृत्ति। निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों धर्म के अंग हैं -

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ।।

(अशुभ से निवृत्ति और शुभ में प्रवृत्ति को ही चारित्र समझें)

अशुभ से निवृत्ति और शुभ में प्रवृत्ति का समन्वय ही धर्म कहा जा सकता है।

यह ठीक है कि युग की आवश्यकता को देखते हुए जैन आगमों में निवृत्ति पर अधिक जोर दिया गया है, किन्तु इससे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि प्रवृत्ति का विरोध किया गया है। ऐसा भ्रम उन्हीं को होता है, जो जैन सूत्रों के मूल पाठों को मनोयोगपूर्वक नहीं पढ़ते, किन्तु देशी-विदेशी विद्वानों के द्वारा जैन धर्म पर लिखे गए लेख देखकर अपनी राय कायम कर लेते हैं, अन्यथा जैनसूत्रों में एक ओर जहाँ- "वेरं मज्झं न केणई ।।" (मेरी किसी के साथ शत्रुता नहीं है) का पाठ पढ़ाया है, वहीं दूसरी ओर "मित्ती मे सव्वभूएसु।" का सुन्दर सबक भी सिखाया है।

यहाँ एक बात को स्पष्ट करना है कि मित्रता का अर्थ प्रेम है, राग नहीं। यदि 'राग' अर्थ होता तो 'वीतराग देव' ऐसा उपदेश ही क्यों देते? इसलिए अच्छी तरह से यह समझ लेना चाहिये कि मित्रता के लिए समता बढ़ाने की जरूरत है, ममता बढ़ाने की नहीं।

राग और प्रेम का रूप मिलता-जुलता होने से बहुत से लोग दोनों को एक समझ लेते हैं, और राग को छोड़ने के प्रयत्न में प्रेम छोड़ बैठते हैं, किन्तु इन दोनों में

जमीन-आसमान से भी अधिक अन्तर है। प्रेम में सूर्योदय की सी आकर्षक मनोहर लालिमा है, तो राग में दुर्गन्धयुक्त सड़े हुए खून की। प्रेम उदार है तो राग संकुचित। प्रेम मोक्ष की सड़क है तो राग नरक की पगड़ंडी। प्रेम पुण्य है तो राग पाप। प्रेम में समता है तो राग में ममता।

मित्रता से दो राष्ट्रों में सन्धि होती है, युद्ध की ज्वाला शान्त होती है, प्रेम बढ़ता है, इसीलिए 'मित्ती मे सव्वभूएसु' का भव्य सन्देश महापर्व पर्युषण प्रतिवर्ष लाता है। लाता है; किन्तु कितने लोग इसे सुन पाते हैं? और तो और, 'जैन' कहलाने वाले भी सब लोग नहीं सुन पाते। जो सुनते हैं, वे समझ नहीं पाते। जो समझते हैं, वे उसे अपने अन्तःकरण में धारण नहीं कर पाते- केवल उच्चारण करके रह जाते हैं। सांवत्सरिक प्रतिक्रमण में श्रमणों-श्रमणियों-श्रावकों-श्राविकाओं के मुख से - 'मित्ती मे सव्वभूएसु' का प्रचण्ड उद्घोष होता अवश्य है, किन्तु शीघ्र ही वह अनन्त आकाश मे विलीन हो जाता है। कण्ठ से नीचे उतर ही नहीं पाता। अन्तःकरण को वह प्रभावित कर ही नहीं पाता। जिनका अन्तःकरण प्रभावित होता है, वे भी उसे आचरण में नहीं ला पाते। उसका यथोचित व्यावहारिक उपयोग नहीं कर पाते।

यही कारण है कि जैन समाज में पारस्परिक वैमनस्य और फूट फैली हुई है। नाना प्रकार के चित्र-विचित्र सम्प्रदायों में विभक्त होकर जैन-समाज रूपी सुन्दर चादर के चिथड़े-चिथड़े हो गये हैं।

वीतराग देव! आप ही बताइये, आपके अनुयायी कहलाने वाले जैनों की विभिन्न टुकड़ियाँ कब संगठित होंगी? पर्युषण के भव्य सन्देश का कोरा उच्चारण न कर उसे आचरण में लाने की सुबुद्धि कब जागेगी? कब श्रमणोपासक सुसंगठित बनकर दुनिया को "मित्ती मे सव्वभूएसु" का पाठ पढ़ाने की योग्यता प्राप्त करेंगे?

निश्चित है कि वीतराग देव इन प्रश्नों का उत्तर देने स्वयं यहाँ आ नहीं सकते, इसलिए इन पंक्तियों के पाठक-पाठिकाओं से ही पूछना चाहता हूँ कि आत्मनिरीक्षण करके वे बतायें कि प्रतिवर्ष आकर मैत्री का संदेश देने वाले पर्युषण पर्व की सच्ची आराधना कब हो सकेगी? कब उदारता, क्षमा, सरलता, सहानुभूति और मैत्री का सक्रिय रूप जीवन में दिखाई देगा? क्या बीती हुई असंख्य असफल संवत्सरियों के समान यह संवत्सरी भी असफल ही रहेगी? असफल ही रहेगी? असफल रहेगी?

-सम्पादक, सत्य भक्त भावना,
स्टार स्टूडियो, इन्दिरा चौक, नागदा जं.-456335 (मध्यप्रदेश)

Tattva bodha

CATURVINŚATISTAVA

Dr. Priyadarsna Jain

TEXT	TRANSLATION
Logassa	-Of the world
Ujjoyagare	-Illuminator
Dhammatithayare	-Establisher of the four-fold tirthas
Jine	-Conquerors of inner enemies
Arihante	-*Arihantas*
Kittaissam	-I shall worship
Cauvisam	-The twenty -four
Pi kevali	-Omniscients/*Tirthankaras*
Usabhamajiyam	-*Risabha, Ajita*
Ca vande	-And I bow
Sambhavamabhinandanam	-to *Sambhava, Abhinandana*
Ca Sumaim	-and *Sumati*
Ca Paumappaham	-and *Padmaprabha*
Supasam	-*Suparshva*
Jinam ca	-*Jinas* and
Candappaham vande	-*Chandraprabhu* I bow
Suvihim ca	-*Suvidhi* and
Pupphadantam	-*Pushpadanta*
Siyala-Sijjansa	-*Sitala, Sreyans*
Vāsupujjam ca	-*Vasupujya* and
Vimalāmanantam ca jinam	-*Vimala, Ananta Jinas* and
Dhammam Santim	-*Dharma, Shanti*
Ca vandāmi	-And to them I bow
Kunthum Aram	-*Kunthu, Aranath*

Ca Mallim	-And ***Malli***
Vande Munisuvayam	-I Bow to ***Munisuvrata***
Namijinam ca	-***Namijina*** and
Vandami Ritthanemi	-I bow to ***Aristanemi***
Pasam taha	-***Parsva*** and
Vaddhamanam ca	-***Vardhamana*** and
Evam mae abhithuā	-Having venerated thus
Vihuyarayamalā	-Devoid of sin and blemish
Pahinajaramarana	-Devoid of old age and death
Cauvisam pi jinavarā	-24 ***Jineswaras***
Titthayarā me	-***Tirthankaras***
Pasiyantu	-Bless me/shower their blessings
Kittiya	-Having praised
Vandiya	-Venerated
Mahiyā	-Worshipped
Je e logassa	-These in the world
Uttamā siddhā	-Supreme perfected soul
Ārugga	-Spiritual health
Bohi labham	-Enlightenment
Samahi varmuttamam	-Peace of mind, supreme ***samadhi***
Dintu	-May they give
Candesu	-The moon
Nimmalayara	-Purer than
Aiccesu	-The sun
Ahiyam payāsayarā	-More illuminating/ lustrous than
Sāgaravargambhirā	-Profound like the Ocean

Siddhā siddhim mama disantu-May the ***Siddhas*** grant me perfection.

Meaning

· I bow to the omniscient twenty-four ***Tirthaṅkaras*** who are the illuminators of the world, who have illuminated the world with Right Knowledge, established the four-fold ***Jaina*** congregation, conquerors of attachment and hatred and other inner enemies. I steadfastly worship them, praise them and humbly bow down to them. The 24 ***Tirthaṅkaras*** or ***Jinas*** are ***Ṛsabha, Ajita, Saṁbhava, Abhinandana, Sumati, Padmaprabha, Suparśva, Chandraprabha, Suvidhi (Puspadanta), Sitala, Sreyansa, Vasupujya, Vimala, Ananta, Dharma, Shanti, Kunthu, Aranatha, Malli, Munisuvrata, Nami, Nemi, Parsva and Vardhamana-*** I humbly bow to them for they are devoid of karmic blemish and have terminated the worldly-sojourn and are free from old age and death. May the 24 ***Jineshwaras***, ***Tirthaṅkaras*** be pleased. Even the celestial gods like ***Indra*** and others worship, praise and bow to them, they are supreme in this world, may they grant me

Arogya i.e. spiritual well being, perfection;

Bodhi i.e. self-realization, emancipation;

Samadhi i.e. spiritual bliss, peace.

They are more splendid than the moons, more brilliant than the suns and more tranquil and profound than the oceans. May the perfected ***Siddhas*** bless me with perfection, in other words I take refuge in them so that I am inspired to become perfect like them.

Explanation

The first chapter of ***Samayika*** instructs one to give up the sinful activities, and this second chapter inspires one to take refuge in the supreme ***Tirthaṅkara*** Lords for then self-realization becomes easy and one can in no time annihilate the ***karmas*** and achieve the transcendental state. Just as a lamp illumines the room, the ***Tirthaṅkaras*** have illuminated the entire universe and are bestowers of peace

and spirituality. As the ***Tirthaṅkaras*** are devoid of attachment and hatred they do not shower anything on anybody nor do they curse anyone, but who so ever chants their name, worships them, is devoted to them, venerates to them, takes refuge in them shall automatically become like them, and this is termed as their grace. ***Jainism*** is the only religion, which says that you can become god, not the creator God but the perfect godhead in ***Nirvana*** enjoying infinite knowledge, bliss and power. ***Tirthaṅkaras*** and other ***Jinas*** too were ordinary mortals like us in their previous incarnations but through devotion and practice of the triple gems they reached the transcendental state and became worthy of veneration. ***Jainism*** does not believe in incarnations, on the other hand it propounds that not only man but all creatures have the potential to rise to Godhood and this is possible only when they realize the nature of the ***Jinas*** i.e. pure and perfected souls. By remembering them we are reminded of our pure nature which is not different from theirs.

Besides the 24 ***Tirthaṅkaras***, the present ***Viharamana Tirthaṅkaras*** of ***Mahavideha ksetra*** too are venerated. The best devotion of the lords is following their commandments in the form of commitment to non-violence, truthfulness, non-stealing, celibacy, detachment, surrender, austerity, acquiring right knowledge, practicing equanimity, spirituality, contentment, etc. Only when the above are practiced-spiritual bliss, peace, self-realization, emancipation eventually dawn on the aspirant and one becomes divine and perfect.

The term ***Tirthaṅkara*** literally means '***Tarati Samsara – maharnavam yena nimittena tat tirtham, Tirtham karoti iti tirthankaraḥ i.e*** that which enables us to transcend the great ocean of birth and death is known as ***tirtha*** and they are said to be four viz. ***Sadhu, Sadhvi, Śravaka, Sravika.*** One who establishes this four-fold ***Tirtha***

is called a ***Tirthankara***.

There have been infinite sets of 24 ***Tirthankaras*** in the past time cycles. In the present cycle ***Rsabha*** was the first and ***Vardhamana Mahavira*** was the last who flourished in different periods in India. Another set of 24 ***Tirthankaras*** shall appear in future age and continue to guide man- kind to spiritual well-being, bliss and perfection.

(Continue)

कंजूसों का बाप

संकलयिता : श्री राजीव माथुर

एक नगर में एक सेठ बड़ा कंजूस था। संयोग से उसकी पत्नी भी ऐसी ही कंजूस थी। एक दिन रात को सेठ अपनी बैठक से उठकर किसी जरूरी काम से बाहर गया। भूल से वह बैठक में दीया जलता छोड़ गया। बीच रास्ते में उसे याद आया कि मैं दीपक जलता छोड़ आया हूँ। व्यर्थ में ही तेल जलेगा और सेठानी भी सो गई होगी। वह कैसे बुझायेगी? यह सोच कर सेठ आधे रास्ते में से ही लौटकर घर आ गया। बैठक का द्वार बन्द था। सेठ ने सेठानी को आवाज दी।

सेठानी बोली- "ठहरो, अभी द्वार खोलती हूँ।"

सेठ चिल्लाया- "नहीं-नहीं, द्वार मत खोलना। किवाड़ों की चूलें घिस जायेंगी। मैं यहीं से काम बताये देता हूँ।"

"क्या बात है?" सेठानी ने पूछा।

सेठ बोला- "दिया बुझा दो। मैं भूल से जलता छोड़ गया था।"

सेठानी बोली- दिया तो मैं बुझा दूँगी, पर लौटकर तुमने अच्छा नहीं किया। जितने का तेल बचाया, उतने के तुम्हारे जूते घिस गये होंगे।"

तपाक से सेठ ने जवाब दिया- "सेठानी! मैं इतना मूर्ख थोड़े ही हूँ। मैं तो जूते हाथ में लेकर आया हूँ। अब वहीं जाकर पहनूँगा, जहाँ से लौटा हूँ।"

-मुंशी हाउस, क्षेत्रपाली चबूतरा, जूनी धान मण्डी, जोधपुर- 342001 (राज.)

विशिष्ट प्रश्नोत्तर

दशवैकालिक सूत्र से पायें तात्त्विक बोध (1)

प्रश्न 1.– दशवैकालिक सूत्र की रचना कब, किसके शासन में, किसके द्वारा एवं क्यों हुई?

उत्तर – आर्य प्रभव, वीर निर्वाण 64 में अंतिम केवली आर्य जम्बू के मोक्ष पधारने पर युग प्रधानाचार्य, गणाचार्य/वाचनाचार्य तीनों प्रकार से सुशोभित होने वाले आचार्य बने। भावी संघ–व्यवस्था के लिए सुयोग्य अधिकारी के रूप में शय्यंभव को देखकर, उन्हें जिनशासन का सर्वविरत रत्न बनाया। 3 वर्ष पश्चात् वीर निर्वाण 72 में दीक्षित सांसारिक पुत्र की अल्पायु को जानकर दशवैकालिक सूत्र की रचना आर्य शय्यंभव ने आचार्य प्रभव के शासनकाल में अपनी 36 वर्ष की तरुणायु में लगभग–

वीर निर्वाण	72
पञ्चम आरक	68
विक्रम पूर्व	398
ईसा पूर्व	455
आज से	2463 वर्ष की पूर्व की।

प्रश्न 2.– विवेक, कठोर अनुशासन, मर जाना, तजना नहीं जिनशासन; राजीमती द्वारा रथनेमि से कहे गए इस कथन को गाथाओं से प्रमाणित कीजिए।

उत्तर – संस्कृत के 'वि' उपसर्ग सहित 'विच्' धातु निष्पन्न वि+विच्=विवेक शब्द का अर्थ है, जड़ से अपने को अलग करना। पर पदार्थ से मोह हटाने का प्रमुख उपाय है, बाहरी वस्तुओं को अपने से अलग जान लिया जाय अर्थात् इस संसार में मेरे अलावा मेरा कोई अपना नहीं है, यह विवेक ही राग घटाने का सबल, समीचीन एवं समर्थ उपाय है।

समाइ पेहाइ परिव्वयंतो, सिया मणो निस्सरइ बहिद्धा।
न सा महं नो वि अहं पि तीसे, इच्चेव ताओ विणएज्ज रागं॥

दशवैकालिक सूत्र- 2/4

समभाव की प्रेक्षा से विचरते हुए साधक का मन कदाचित् संयम के बाहर

निकल जाए तो 'वह मेरी नहीं है और न मैं उसका हूँ' अर्थात् आत्मा से भिन्न स्त्री आदि, पर वस्तु मेरी नहीं है और न ही मैं उसका हूँ, इस प्रकार का विवेक करके अपनी आत्मा को पुनः संयम में स्थिर करलें। विवेक से अस्वाभाविक चाह की निवृत्ति स्वतः हो जाती है। यदि इसमें सफलता न मिले तो दूसरा उपाय है कठोर अनुशासन-

आयावयाही चय सोगुमल्लं कामे कमाही कमियं खु दुक्खं।
छिंदाहि दोसं विणइज्ज रागं एवं सुही होहिसि संपराए॥

दशवैकालिक सूत्र- 2/5

सर्दी सहो-गर्मी सहो। देह को तपाओ। मन को सहिष्णु बनाओ। आत्मा को तप की आँच लगाओ। जिससे वृत्तियाँ आत्मा से उदय होकर मन को आंदोलित न करें और देह को न झंझोड़ें।

सुकुमार मत बनो। सुकुमारता पर विकार जल्दी धावा बोलते हैं। सुकुमारता के सहारे वासना की बेल अतिशीघ्र फैलती है। तितिक्षा से सुकुमारता का त्याग करो। काम से-इच्छा से-भोगों से दुःख हैं, अतः इनसे पार हो जाओ तो दुःख चले जायेंगे। सुकुमार व्यक्ति पर विकार जल्दी आक्रमण करते हैं। फिर सुकुमारता मानव में कायरता भर ही देती है, जिससे कष्ट-सहिष्णुता पलायन कर जाती है। अतः भगवान् साधक को ललकार रहे हैं- "उठो, सुकुमारता को छोड़ो और साधना के लिए कमर कसो।"

सुकुमारता जन्मजात है तो शरीर में है- उसे मन में प्रविष्ट मत होने दो, जिससे दैहिक सुकुमारता को त्यागने में कठिनाई नहीं होगी। इस प्रकार तीनों ऋतुओं में संयत-चर्या रखने पर भी चारित्र मोहनीय कर्म के प्रबल उदय के कारण साधक अपने बाहर और भीतर के क्षेम को जीतने में समर्थ नहीं हो सका तो अंत में- "मर जाना, तजना नहीं जिन शासन।"

"वंतं इच्छसि आवेउं, सेयं ते मरणं भवे"॥

दशवैकालिक सूत्र- 2/7

वमन किये हुए भोगों को ग्रहण करने अर्थात् असंयमी जीवन को चाहने से तो अच्छा है, संयम पूर्वक मर जाना। "प्राण जाय पर प्रण नहीं जाए।" अकार्य-सेवन से व्रतों का भंग होता है। उसकी अपेक्षा व्रतों की रक्षा करता हुआ साधक यदि मरण-शरण हो जाता है, तो भी वह 'आत्मघाती' नहीं, अपितु 'व्रत-रक्षक' कहलाता है। भूखा मनुष्य चाहे

कष्ट पा ले, परन्तु वह धिक्कारा नहीं जाता। वमन किये हुए को खाने वाला धिक्कारा जाता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति शील भंग करने की अपेक्षा मृत्यु को अंगीकार कर लेता है, वह एक बार ही मृत्यु का कष्ट महसूस करता है, किन्तु जिनशासन का गौरव तथा श्रमण-धर्म की रक्षा कर लेता है। परन्तु जो परित्यक्त भोगों का पुनः उपभोग करता है वह अनेक बार, मृत्यु-तुल्य अपमान अनुभव करता है। अतः कहा गया है कि मर्यादा का अतिक्रमण करने की अपेक्षा तो मरना श्रेयस्कर है।

पर्व पर्युषण आया है

श्रीमती कमला सुराणा

(1)

बड़ी प्रतीक्षा के बाद पर्व पर्युषण आया है
हमारे लिए बड़ी-बड़ी सौगातें लेकर आया है
शील पालो, संवर करो
पौषध का उपहार लेकर आया है।
सामायिक करो, आत्मालोचन करो
कषाय शमन का सन्देश लेकर आया है।

(2)

आर्या हे! प्रवचन सरोवर में
ज्ञान - पद्म खिला दिए
जिसने पा लिया, धारण कर लिया
उसने अमृत पा लिया
जिसने छोड़ दिया वो खो गए
अब तो सम्भल जा रे, प्राणी
नहीं तो गर्त, में पड़ जाएगा।।

(3)

चेतो जैनियों चेतो, क्यों खोते हो अपनी संस्कृति,
अपनी संस्कृति, निःस्वार्थ स्नेह, गरिमा की थाती।
पाश्चात्त्य देशों की अनुकृति छोड़ो
अपने संस्कारों को दृढ़ करो।

-ई-123 नेहरु पार्क, सरदारपुरा, जोधपुर-342001(राज.)

कविता

मृत्यु-बोध

श्री कस्तूरचन्द जैन 'अष्टम' *

हम जानते हैं मृत्यु से बच पायेंगे हरगिज नहीं।
किन्तु फिर भी भूल जाते, भोग-लिप्सा में कहीं।।
जीवन पड़ा है अभी तो, हम सोचते रहते यही।
मृत्यु-भय को टालने में, देर नहीं करते कहीं।।

मृत्यु की घड़ी नहीं निश्चित, तैयार सदा ही रहना है।
बीमारी, रोग, महामारी, दुर्घटना मात्र बहाना है।।
बैठे-बैठे कर रहे भजन, देखो फिर भी मर जाना है।
मृत्यु निश्चित है जीवन में, ध्रुव सत्य नहीं टल पाना है।।

मृत्यु से बचने का उपाय, मृत्यु रहस्य को पाना है।
अनिवार्य सामना करना है, हँसते-हँसते मर जाना है।।
स्थिर बुद्धि, स्थिर प्रज्ञा, स्थिर प्रज्ञ अब बन जाना है।
नश्वर शरीर तो जायेगा, पर मृत्यु से बच पाना है।।

मृत्यु की तिथि नहीं होती, बन अतिथि कभी आ सकती है।
धोखा नहीं देती मृत्यु कभी, वह वचन भंग नहीं करती है।।
सोते, उठते, बैठते, जगते, खाते, चलते आ सकती है।
यह इंतजार नहीं करवाती, यह कभी दया नहीं करती है।।

आधि, व्याधि, शौकादि, रोग, चिंता सबको हर लेती है।
ईर्ष्या, रोगादि, क्लेश, मोह, मृत्यु सबको ढक देती है।।
यह तेरा और यह मेरा है, सब भेद खत्म कर देती है।
यह मृत्यु बड़ा महोत्सव है, मत कर चिंता सुख देती है।।

-नृसिंह कॉलोनी, खैरली, जिला-अलवर (राज.)

* लेखक का स्वर्गवास 25 जुलाई, 2009 को होने से पूर्व प्रेषित।

धारावाहिक (क्रमशः 63)

जम्बूकुमार

जैनदिवाकर श्री चौथमल जी म.सा.

पूर्ववृत्तः- प्रभव चोर ने जम्बूकुमार के रात्रिकालीन वृत्तान्त से प्रभावित होकर संयम मार्ग में आरूढ़ होने का निश्चय किया तथा उसे राजा कौणिक के समक्ष प्रकट किया। यह जानकर राजा को परम प्रसन्नता हुई। प्रातः काल होने के साथ जम्बूकुमार और प्रभव का वृत्तान्त सम्पूर्ण नगर में फैल गया। सभी के मन उनके प्रति श्रद्धावनत हो गये, किन्तु चम्पानगर के वासियों ने उन्हें साधु मार्ग धर्म अङ्गीकार करने की अनुमति प्रदान नहीं की। तब जम्बूकुमार ने सविनय उनके समक्ष शर्त रखते हुए कहा-

मेरी शर्त यही है कि जब तक मैं संसार में रहूँ तब तक आप लोग मुझे मृत्यु से और आधि-व्याधि से बचाए रहें।

जम्बूकुमार ने जो कहा उसकी कल्पना भी किसी ने नहीं की थी। संक्षिप्त और सारगर्भित एक बात से ही सब सन्नाटे में आ गए। सब एक दूसरे के मुंह की ओर ताकने लगे। किसी को कुछ भी उत्तर देते न सूझ पड़ा। जो बात मानवीय शक्ति से परे है, उसे पूर्ण करने की हाँ कौन भरेगा? किन्तु बात यथार्थ है। यदि हम मरण और आधि-व्याधि का जिम्मा अपने ऊपर नहीं ले सकते तो हमें दीक्षा लेने से रोकने का भी किसे क्या अधिकार है?

अन्त में एक मुखिया बोले- "जम्बूकुमार! आपने बड़ी महत्त्वपूर्ण बात हमारे सामने रखी है, मगर यह तो हम लोगों के सामर्थ्य से बाहर है। साधारण मनुष्य किस गिनती में है, इन्द्र भी इस शर्त को पूरी नहीं कर सकता। काल आ जाने पर बदले में हम अपने प्राण देकर भी आपकी रक्षा न कर सकेंगे। इस प्रकार बीमारी को भी नहीं टाल सकते।"

जम्बूकुमार- "सत्पुरुषों ! जब यह निश्चित नहीं है कि मृत्यु किस समय आकर मनुष्य को उठा ले जाएगी। और हम यह भी नहीं जानते कि

बीमारी कब आकर इस क्षणभंगुर शरीर को बेकार कर देगी तब धर्म की साधना करने में विलम्ब न करना ही श्रेयस्कर है। अतएव आप लोग मुझे आशीर्वाद दीजिए कि मैं जिस पथ पर प्रयाण कर रहा हूँ उसमें पूर्ण सफलता प्राप्त हो।''

नागरिक जन–''आपके वैराग्य की, आपकी आध्यात्मिक निष्ठा की ओर आपके अनुपम त्याग की हम लोग हृदय से सराहना करते हैं, मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं। आपका जीवन सफल और सार्थक हो गया। आपके निमित्त से आपका परिवार भी तर गया है। संसार में आपके समान धर्मात्मा पुत्र का संयोग मिलना तीव्र पुण्य का फल है। आपका चरित्र हम बूढ़ों के लिए जीवित आदर्श है। आप प्रसन्नता के साथ दीक्षा ग्रहण कीजिए।''

जम्बूकुमार! हमें धिक्कार है कि हम लोग सांसारिक मोह ममता में बुरी तरह फंसे हुए हैं। रात-दिन अर्थ और काम रूप पुरुषार्थ की आराधना में ही निमग्न रहते हुए अपने जीवन को बिगाड़ रहे हैं। धर्म की आराधना से सर्वथा पराङ् मुख हो रहे हैं। परम पुरुषार्थ मोक्ष का स्वप्न में भी विचार नहीं करते। पहले भवों में जो पुण्य उपार्जन किया था उसके फलस्वरूप यह जन्म, मानव भव, उच्च कुल, धर्म श्रद्धा, परिपूर्ण इन्द्रियाँ आदि सब सामग्री प्राप्त हुई है। इसे भोग रहे हैं, पर भविष्य की जरा भी चिन्ता नहीं करते हैं। मूल पूंजी खाने वाले व्यापारी के समान हमारा भविष्य एकदम अन्धकार में है। फिर भी मोह के जाल में पड़े हैं और संसार को त्यागने में असमर्थ हैं।

जम्बूकुमार– ''सज्जनों! आप धर्म के स्वरूप को समझते हैं। वास्तव में धर्म ही एक मात्र सारभूत वस्तु है। संसार के सुख भी धर्म के निमित्त से ही प्राप्त होते हैं। कहा भी है–

धम्मेण कुलपसूई, धम्मेण य दिव्वरूवा संपत्ती।
धम्मेण धण समिद्धि, धम्मेण सुवित्थडा कित्ती।।

अर्थात् धर्म के प्रभाव से सत्कुल में जन्म होता है, धर्म से दिव्य रूप की प्राप्ति होती है, धर्म से धन-वैभव मिलता है और धर्म से ही विशाल कीर्ति फैलती है।

इसके अतिरिक्त परलोक में भी एकमात्र धर्म ही सहायक होता है।

सांसारिक नाते-रिश्तेदार और धन आदि सब यहीं रह जाते हैं। कोई साथ नहीं देता-

भीमंमि मरणकाले मोत्तूणं दुक्खसंविढत्तं पि।
अत्थं देहं सजणं धम्मो च्चिय होइ सुसहाओ।।

भावार्थ :- भयंकर मृत्यु का समय जब उपस्थित होता है तब अत्यन्त क्लेश सहन करके चोटी से ऐड़ी तक पसीना बहा कर प्राप्त किया हुआ धन धरा रह जाता है। यह देह और स्वजन भी साथ देने में समर्थ नहीं होते। उस समय केवल धर्म ही सहायक होता है।

इस प्रकार जब अन्त में स्वजन- सखा आदि कोई भी सहायक नहीं होता, तब उन्हें सच्चा बन्धु नहीं कहा जा सकता। सच्चा बन्धु तो वही है जो अन्त तक परलोक में भी साथ देता है। जैसा कि कहा है-

धम्मो बन्धू सुमित्तो य, धम्मो य परमो गुरू।
मोक्खमग्गे पउट्टाणं, धम्मो परमसन्दिणो।।

अर्थात् धर्म बन्धु है, धर्म सच्चा मित्र है, धर्म परम गुरु है, और मोक्ष मार्ग में प्रवृत्त होने वाले पथिकों के लिए धर्म ही श्रेष्ठ रथ है।

सज्जनों! ऐसा समझकर प्रत्येक प्राणी को धर्म का संचय करना चाहिए। जितनी मात्रा में धर्म का अर्जन किया जाएगा उतनी ही मात्रा में आत्मा का हित और सुख होगा। जो लोग क्रियात्मक धर्म की आराधना न कर सकते हों उन्हें धर्म भावना का चिन्तन तो प्रतिदिन प्रातःकाल अवश्य ही करना चाहिए। ऐसा करने से धर्म की रुचि हृदय में जागृत होगी और एक दिन आएगा जब वह रुचि क्रिया का रूप धारण करेगी।

जम्बूकुमार ने नगर के प्रतिष्ठित पुरुषों को इस प्रकार धर्म का सन्देश सुनाकर विदा किया। उनके मार्ग में जो कठिनाइयाँ उपस्थित हुईं, उन पर बड़ी वीरता के साथ विजय प्राप्त कर जम्बूकुमार ने अपने पथ को सर्वथा सुरक्षित बना लिया। सच है जिनके हृदय में धर्म की सच्ची लगन होती है, जो अपने जीवन को धर्म में तन्मय बना लेते हैं, उन्हें च्युत करने की शक्ति तीन लोक में किसी के पास भी नहीं है।

इसके अनन्तर जम्बूकुमार, उनके माता-पिता, जम्बूकुमार की आठों पत्नियाँ और उनके भी माता-पिता, इस प्रकार सत्ताईस व्यक्ति एक साथ

मिलकर संयम की साधना के लिए चलने को उद्यत हुए तो उसी समय महापुरुष प्रभव भी अपने साथियों के साथ आ गए। इस प्रकार दीक्षाभिलाषियों की संख्या पाँच सौ सत्ताईस हो गई। सब एक साथ जब नगर में होकर श्री सुधर्मा स्वामी के चरणारविन्द में पहुँचने के लिए निकले तो नगर में दर्शकों के समूह के समूह उमड़ पड़े। उस समय का दृश्य अद्वितीय था। सबके हृदय वैरागियों के प्रति अतिशय आदर और श्रद्धा से ओतप्रोत हो गए थे। सब एक स्वर से उनके त्याग और वैराग्य की प्रशंसा कर रहे थे। नगर भर में एक प्रकार का धर्ममय वायुमण्डल बन गया था। सभी लोग इस आदर्श परिवार की धर्मनिष्ठा से प्रभावित हो रहे थे।

सभी दीक्षार्थी अन्त में भगवत्सुधर्मा स्वामी के समीप आ पहुँचे। सबने उन्हें विधिपूर्वक वन्दना की, नमस्कार किया और कहने लगे-"भगवन्! यह संसार जन्म-जरा-मरण की वेदना रूप भट्टी में जल रहा है, चारों ओर से जला रहा है। संसार के समस्त प्राणी विविध प्रकार की आधियों-व्याधियों के जंगल में बुरी तरह फंसे हुए हैं। संयोग का सुख भोगते-भोगते ही वियोग की वेदना आकर सताने लगी है। हृदय में रही हुई कामनाएँ मनुष्यों को अत्यन्त दुःख दे रही हैं। किसी को साता नहीं है। कोई सन्तुष्ट नहीं है। सभी जीव अपने जीवन को दुःखों से मुक्त कराने वाले हैं। अतएव हम लोग आपके चरणों की शरण में उपस्थित हुए हैं। कृपा कर हमें स्वीकार कीजिए। हमारे पथ-प्रदर्शक बनिये। जिस दीक्षा को जिनेन्द्र भगवान् स्वयं धारण करते हैं, वह दीक्षा हम लोग भी धारण करना चाहते हैं। कृपया हमें अपना आश्रय दीजिए। हम आपके अनुचर बनेंगे। आपकी इस लोकोत्तर दया के लिए हम कृतज्ञ होंगे।

इसके अनन्तर सभी वैरागी ईशान कोण में गए और वहाँ जाकर पहले के वस्त्रों एवं अलंकारों को त्याग कर साधु का पावन वेश धारण कर लिया। सभी ने मुँह पर मुखवस्त्रिका बांधी, कांख में रजोहरण लिया और हाथ में झोली लटकाई। शरीर पर एक स्वच्छ सफेद चादर ओढ़ी। वह श्वेत चादर शुक्ल ध्यान के आदर्श का स्मरण कराती थी। वह आत्मा को कषाय आदि के विकारों से मुक्त कर स्वच्छ बनाने की साक्षीभूत थी। इसी आदर्श को प्रकट करने के लिए सफेद चोलपट्टा पहना गया था। इस प्रकार साधु का

धवल वेश बनाकर सब दीक्षार्थी अत्यन्त विनय और नम्रता के साथ श्री सुधर्मा स्वामी के समक्ष उपस्थित हुए।

श्री सुधर्मा स्वामी ने सबको मुनि पद की गुरुता का बोध कराया। यह दीक्षा सामान्य दीक्षा नहीं है। इसे जिनेन्द्र भगवान् भी आत्म-कल्याण के लिए धारण करते हैं। संसार-सागर से तारने वाली इस दीक्षा को अनादि काल से अनन्त तीर्थङ्करों ने, चक्रवर्तियों ने, सम्राटों ने तथा अन्य अनेक महापुरुषों ने धारण किया है। इसे प्रभूत पुण्य का उदय होने पर ही धारण किया जा सकता है। जो इस दीक्षा से दीक्षित होते हैं वे संसार में रहते हुए भी उससे सर्वथा अलिप्त रहते हैं। संसार को नाटक समझते हैं। उसमें लेश मात्र भी अनुराग नहीं करते। यह दीक्षा सिंहवृत्ति है। शूरवीर और धीर पुरुषों का कर्त्तव्य है। कायर इस पथ पर नहीं चल सकते। विषयों के दास इस मार्ग का अनुसरण नहीं कर सकते। अतएव हे मुमुक्षुओं! इस पद की गम्भीरता, गुरुता और महत्ता को बराबर समझो। प्राणपण से तुम्हें इस पद की रक्षा करने के लिए तैयार रहना चाहिए। यदि तुम संसार के आकर्षणों से आकृष्ट होकर अपने पद से डिग गए तो स्मरण रखना, अपनी आत्मा का घोर अकल्याण करोगे। इतना ही नहीं, इससे जिन भगवान् के मार्ग की अपकीर्ति होगी। धर्म का उपहास होगा। संसार के चक्षु चर्ममय हैं। वे मोटी बात जानते हैं। धर्म की आराधना करने वालों के सदाचार-दुराचार से ही धर्म की श्रेष्ठता-निकृष्टता का परीक्षण होता है। अतएव तुम सबको धर्म की साक्षात् मूर्ति बनना होगा। तुम्हारा प्रत्येक व्यवहार धर्म की कसौटी होगा। अतएव प्रत्येक व्यवहार में धर्म के आदर्श को अपने सामने रखना।

एक चेतावनी और देनी है- यह दीक्षा जीवन-पर्यन्त की दीक्षा है। जिस उत्कृष्ट भाव से आज तुम इसे स्वीकार करना चाहते हो, वह उत्कृष्ट भाव स्थायी बनाये रखना। यदि किसी मोह के वश होकर इस कंटक-पथ पर अग्रसर हो रहे हो या क्षणिक विरक्ति की तरंग में बहकर यह निर्णय किया हो तो फिर एक बार विचार कर लो। दृढ़ निश्चय के बिना, आरम्भ शूरता से भविष्य उज्ज्वल बनने के स्थान पर अधिक मलिन बन जाता है। यदि तुम्हें संसार में दुःखों का आकार दीखता हो तथा संसार की माया से मुक्त होने में ही सच्चा कल्याण दृष्टिगोचर होता हो तो फिर यह मार्ग बहुत कठिन भी न

होगा। देवानुप्रियों! इसलिए मैं कहता हूँ, पुनःपुनः कहता हूँ कि दीर्घ दृष्टि से अपने हित का विचार करो। शाश्वत कल्याण की कामना अन्तःकरण में बलवती हो गई है तो आओ, मैं तुम्हें दीक्षित करता हूँ।

श्री सुधर्मा स्वामी की समयोचित देशना पाकर सबने उन्हें फिर वन्दना-नमस्कार किया। सबने अपने निश्चय को पुनः प्रकट किया। तब श्री सुधर्मा स्वामी ने सब मुमुक्षुओं को यावज्जीवन पाँच महाव्रत रूप मुनि दीक्षा से दीक्षित कर दिया। इसके पश्चात् नवदीक्षित मुनियों को इस प्रकार शिक्षा दी गई-

जयं चरे जयं चिट्ठे जयमासे जयं सए।
जयं भुंजंतो भासंतो पावकम्मं न बंधइ॥

अर्थात् यतना पूर्वक - अत्यन्त विवेक और सावधानी के साथ चलो, यतना पूर्वक खड़े होओ, यतना पूर्वक बैठो, यतना पूर्वक सोओ, यतना पूर्वक आहार करो और यतना पूर्वक भाषण करो। जो यतना के साथ प्रवृत्ति करता है अर्थात् अपने मन, वचन एवं काय की प्रवृत्ति को विवेक के साथ जोड़ लेता है, वह पाप कर्मों का बन्ध नहीं करता। क्रमशः

समय-प्रबन्धन

श्री अशोक कवाड़

सभी कार्यों के लिए हमारे पास समय है और सभी कार्य समय पर पूर्ण होने चाहिए। कार्य को कब करना और कब नहीं करना, इसका विवेक होना चाहिए।

86400 सैकिण्ड का समय सभी के पास प्रतिदिन के लिए निधि है। इस निधि के प्रत्येक सेकण्ड का उपयोग हमको करना आना चाहिए। कार्य को चार हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है- (1) बहुत महत्त्वपूर्ण तथा शीघ्र भी (2) बहुत शीघ्र, पर महत्त्वपूर्ण नहीं, (3) शीघ्र भी नहीं और महत्त्वपूर्ण भी नहीं, (4) शीघ्र नहीं, परन्तु महत्त्वपूर्ण। एक अच्छा प्रबन्धक वह होता है जो महत्त्वपूर्ण कार्य को अतिशीघ्र नहीं, किन्तु सोच-विचार करके सुनियोजित करे। *(जयपुर शिविर में व्यक्त विचार)*

-Prithvi Exchange, 33, Montieth Road, Egmore, Chennai-600008

उपन्यास (6)

सुबह की धूप

श्री गणेशमुनि जी शास्त्री

पूर्ववृत्तः- मीरा के साथ विवाह करने के आलोक के निश्चय को सुनकर किशनलाल नाराज हो गए। और फिर शान्ति के समझाने पर कुछ शान्त हुए और भोजन किया। उसी समय क्रान्तिलाल जी अपनी बेटी का रिश्ता लेकर आ गए। आलोक ने उनके आने की सूचना दी तो किशनलाल ने अन्दर से बाहर आकर अभिवादन करते हुए उनके आने का कारण पूछा। प्रत्युत्तर में क्रान्तिलाल कहते हैं-

'लालाजी! आप से कोई बात छुपी हुई तो है नहीं। आलोक ने आपको बतला ही दिया होगा।'

'हाँ, उसने मुझे आज ही कहा था कि आपकी बेटी और आप, आलोक पर मुँह धोये बैठे हैं। लेकिन, मैंने मना कर दिया है उसे। यह सम्बन्ध नहीं हो सकता।'

'क्यों, ऐसी क्या अड़चन है लाला जी! मैं किसी गैरजाति का तो हूँ नहीं।'

'बात जाति की नहीं है। दसअसल, हमारे और तुम्हारे बीच, बहुत दिनों तक जो प्रतिद्वन्द्विता चली है, उसने हमारे हृदय में नफरत की जो आग लगा दी थी, वह अभी तक बुझी नहीं है।'

'कैसी बात करते हैं आप! भला इस तरह की लड़ाई किस-किस में नहीं होती। सच पूछिए तो मैं उन्हीं घावों को भरने के लिए आपके पास आया हूँ। अपनी बेटी मीरा को आपके घर में देना चाहता हूँ।'

'बेटी देने आये हो, या बेटा ले जाने के लिये, यह मैं अच्छी तरह से जानता हूँ क्रान्तिलाल! अच्छा होगा, इस समय तुम इस सम्बन्ध में बात न करो।'

'देखिए, पुराने गुस्से को थूक दीजिए। यह हमारा आपसी मामला नहीं है। बल्कि हम दोनों के लड़के-लड़की के जीवन का प्रश्न है। फिर, एकतरफा दुश्मनी भी अच्छी नहीं है। आलोक का स्वभाव मुझे बहुत अच्छा लगा है। इसीलिए, आपके पास आया हूँ। सोचता हूँ, आलोक और मीरा प्रणय-सूत्र में बंध जायें, तो आलोक के इंग्लैण्ड जाने का खर्चा मैं उठा लूँगा।'

'मैं अभी अपाहिज नहीं हो गया हूँ, क्रान्तिलाल, कि अपने बच्चे का खर्च

किसी गैर से उठवाऊँ। एक को इंग्लैण्ड भेजा था। उसी का जख्म तो अभी भरा नहीं है। फिर दूसरा जख्म जानबूझ कर कैसे कर लूँ? मुझे इसको इंग्लैण्ड नहीं भेजना है।'

'पिताजी! यह क्या कह रहे हैं आप' – आलोक ने कमरे में प्रवेश करते हुए कहा।

'तू चुप रह। अपना काम कर! तू मेरा लड़का है, न कि मेरा बाप। मेरा फर्ज था कि तुम्हें अपने पैरों पर खड़ा कर दूँ। वह मैंने कर दिया। इंजीनियरिंग करवा दी है तुझे। अब और क्या चाहता है?'

'आप न्याय की बात नहीं कर रहे हैं पिताजी! एक लड़के को तो आपने दो वर्ष इंग्लैण्ड में रखा, और अब मुझे साल भर के लिए भेजने में भी अड़चनें डाल रहे हैं। कुछ तो सोचिए पिताजी।'

'जो गलती मैं एक बार कर चुका हूँ, उसे दोहराना नहीं चाहता।'

'लालाजी! कुछ धैर्य से काम लीजिए। यह आलोक के जीवन का प्रश्न है।'

शान्ति, नाश्ता लेकर वहाँ आई और बीच में रखी मेज पर प्लेटें सजाने लगीं।

माँ को देखकर, आलोक बोला– 'माँ! देखा पिताजी को....।'

'मैं देख भी रही हूँ, और सुन भी रही हूँ। इनके आगे मेरी एक भी नहीं चल सकती बेटे!'

'आप भी किशनलाल जी, किसी बात को पकड़ लेते हैं तो.....'

क्रान्ति को बीच में ही टोकते हुए बोला किशनलाल– 'देखिये! मैं आपसे राय नहीं ले रहा हूँ। इसको मुझे इंग्लैण्ड नहीं भेजना है।'

'देखिए किशनलाल जी! मैं यहाँ अपना अपमान कराने के लिए नहीं आया हूँ। मुझे नहीं मालूम था कि आप इतनी जोर से गाँठ लगा कर रखते हैं। मुझे आज्ञा दीजिये' – कहता हुआ क्रान्तिलाल उठने लगा।

'यह नहीं हो सकता। आप चाय–काफी लिये बिना नहीं जा सकते'– शान्ति ने उन्हें टोकते हुए कहा।

'जी क्षमा कीजिए। एक तरफ तो अपमान, दूसरी तरफ सम्मान। यह दोहरी नीति मेरी समझ में नहीं आती। एक बार आप लोग, अपने निर्णय पर फिर

से विचार कर लें। अच्छा, आलोक बाबू! अब मैं चलता हूँ'- कहकर क्रान्तिलाल उठ गया। उसने हाथ जोड़कर आलोक के माता-पिता दोनों को नमस्कार किया, और निकल आया।

क्रान्तिलाल के पीछे-पीछे आलोक और शान्ति भी उसे छोड़ने के लिए द्वार तक आये। क्रान्तिलाल ने पुनः पीछे मुड़कर इन दोनों को नमस्कार किया, और अपनी कार में आकर बैठ गया। खिड़की बन्द होते ही कार ने हिचकोला खाया, और चल पड़ी। माँ-बेटे दोनों वापिस अन्दर चले आये।

'घर आये मेहमान का इस तरह सम्मान किया जाता है?' पति के निकट पहुँचकर शान्ति ने कहा- 'यह कोई अच्छी बात नहीं है।'

'क्या कहता उस पाजी को? वह तो नम्बर एक का मक्कार और स्वार्थी है। आलोक के गले में अपनी घंटी बांधने का अवसर तलाश रहा है। इसीलिए बढ़-चढ़कर बातें बना रहा था।'

'आखिर कोई न कोई घंटी तो बांधनी ही पड़ेगी। अगर आलोक को वही पसन्द है, तो अपना क्या जाता है?'

'नहीं, मुझे वह घंटी पसन्द नहीं है।'- किशनलाल ने अपनी रुचि स्पष्ट की।

'पिताजी! क्या कह रहे हैं आप! गला मेरा है। मैं जिसे चाहूँगा, उसे ही गले से बाधूँगा।'

'लेकिन घर मेरा है। जिस मैं पसन्द नहीं करूँगा, उस घंटी को इस घर में घुसने नहीं दूँगा।'

'तब ठीक है। मैं भी उसके अलावा कोई दूसरी घंटी नहीं लटकाऊँगा।'

'तुम बाप-बेटे आपस में झगड़ पड़ोगे क्या?'

'माँ! देखा पिताजी को। फिर मत कहना कि आलोक.....'

'जला डाल मुझे' बीच में ही बोल पड़ा किशनलाल- 'नालायक! जुबान चलाते हुए शर्म नहीं आती तुझे।' गुस्से में भरा हुआ वह उठा, और एक तमाचा आलोक के गाल पर जड़ दिया।

आलोक, चुपचाप अपना गाल सहलाने लगा। पर, शान्ति उसके निकट पहुँची, और बेटे के सिर पर लाड़ से हाथ फिराती हुई, अपने पति कों घूर कर बोली- 'जवान बेटे को तमाचा मारते हुए आपके हाथ नहीं कांपे? पूरा घर तबाह

कर डालने पर तुल गये हो क्या?

'तबाह मैं कर रहा हूँ, या ये नालायक! मैंने क्या-क्या योजनाएँ बनाई थीं सबके लिए। सब की सब राख होती जा रही हैं।'

'माँ! तुम स्वयं सोचो! क्या कमी है क्रान्तिलाल जी में? जैसा नाम है, वैसे ही विचार हैं। अपनी लड़की के लिये सब कुछ करने को तैयार हैं। बेचारे किस आशा के साथ आये थे। पिताजी ने कितना कुछ भला-बुरा नहीं कहा। फिर भी, मुस्कराते हुए लौट गये।'

'वे तुझे खरीदना चाहते हैं। लेकिन मैं तुझे बेचना नहीं चाहता।'

'मैं बिक कहाँ रहा हूँ। मेरा सौदा तो आप करने पर तुले हैं।'

वे तुझे गोद लेना चाहते हैं।'

'मैं गोद नहीं जाऊँगा। अब बोलिये।'

'मेरी शर्त के मुताबिक तेरा विवाह होगा।'

' आपकी शर्तें मुझे मंजूर है। पर, दहेज के नाम पर एक कौड़ी भी इस घर में नहीं आने दूँगा। इस घर में केवल मीरा आएगी, और कुछ नहीं।'

'तब यह सम्बन्ध नहीं हो सकता।'

'यही सम्बन्ध होकर रहेगा। मैंने गलती की जो आप की राय ली। मुझे भी बड़े भाईसाहब की तरह विवाह कर लेना चाहिए था।'

'जा, तू भी चला जा अपने बड़े भाई की तरह।.....दूर हो जा मेरी आँखों के सामने से। मैं यही सोच लूँगा कि मेरे तीन लड़के न होकर, सिर्फ एक लड़का और एक लड़की ही है। जा, तू भी कर ले अपनी मन मर्जी का विवाह।... मेरा तुझसे कोई सम्बन्ध नहीं है।...हरामखोर! हट जा'-चीखकर बोला किशनलाल।

'ठीक है। आप कह रहे हैं तो मैं जा रहा हूँ।'- कहते हुए आलोक ने किशन और शान्ति के पैर छुए, फिर जिस हालत में वह खड़ा था, उसी में घर से बाहर आ गया।

'वह जा रहा है, रोकिये न उसे'- विकल होती हुई बोली शान्ति।

'घर से जाने वाले के मैं पैर नहीं बाँध सकता शान्ति! मुझे लगता है, इस घर की बर्बादी के दिन आ गये हैं।'

'इसका कारण भी आप ही हैं। छोटी-छोटी बातों पर बच्चों को घर से

निकल जाने को कह देते हो।'

'मैं अपने मंसूबों को मिट्टी में मिलते हुए नहीं देख सकता।'

'वे तो सब मिट्टी में मिल गये हैं। बेटे के दहेज में मिल प्राप्तकर, आप मिल मालिक होने का स्वप्न देख रहे थे। क्या यह शोभाजनक बात है। आपके विचारों में शोषण की बू आती है। आपके चाहने भर से सब कुछ नहीं हो जायेगा। होगा वही, जो भगवान् चाहेगा।...आप तो लगे लगाये पौधों को उखाड़ कर फेंकने पर तुले हो।'

'जिस पौधे से फल नहीं मिले मैं उसे अपने बगीचे में नहीं रख सकता।'

'फल न सही, छाया तो देते ही। अब क्या मिलेगा आपको? यह तो सोच लिया होता? यदि आपके मन में बैठे हुए दहेज- राक्षस का अन्त नहीं हुआ, तो हो सकता है, कल के दिन दीपक भी इसी राह पर चला जाये।'

'शान्ति!'- एक जोरदार चीख के साथ, किशनलाल का हाथ ऊपर तो उठ गया, मगर, शान्ति का तमतमाया हुआ चेहरा देखकर, वह उठा का उठा रह गया।

'मारिये.....मारिये मुझे! मेरी ममता के टुकड़े-टुकड़े करके आप मुझे रोने के लिये ही जीवित रख रहे हैं क्या?.....क्यों नहीं मुझे भी धक्का देकर घर से बाहर निकाल देते हो?'

शान्ति! तुम मुझे अभी अकेला छोड़ दो। मेरा चित्त बिल्कुल स्थिर नहीं है।'- कहता हुआ किशनलाल, कमरे में पड़े पलंग पर लेट गया, और चादर ओढ़कर उसने अपना चेहरा छुपा लिया।

और शान्ति, सिसकियाँ भरती हुईं, उस कमरे से बाहर चली गई।

क्रमशः

आवश्यक सूचना

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल के सभी सत्साहित्यिक आजीवन सदस्यों को सूचित किया जाता है कि मंडल से प्रकाशित नूतन सत्साहित्य -(1) प्रेरक कथाएँ, (2) गमा, (3) जैन विचार में शिक्षा एवं (4) नन्दीसूत्र, डाक व कोरियर द्वारा नि:शुल्क भिजवा दी गई है। जिन सदस्यों को सत्साहित्य प्राप्त नहीं हुआ है, वे लिखित में सूचना भिजवाने की कृपा करावें। जिससे पुन: साहित्य भिजवाया जा सके। यदि पते में परिवर्तन करना हो तो मय फोन नं. के सूचना भिजवावें।

-प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल

नारी-स्तम्भ

वैयावृत्त्य का आनन्द

श्रीमती सुशीला बोहरा

प्रत्येक मनुष्य जीवन में सुख, शान्ति तथा आनन्द का अभिलाषी है। जीवन की सम्पूर्ण भागदौड़ अनादि काल से इनको प्राप्त करने के लिये हो रही है। लेकिन भौतिक सुख सुविधाओं से प्राप्त सुख मृगतृष्णा की भाँति है, जितना ही इसे पाने के लिये दौड़ लगाते हैं उतना ही वह ओझल होने लगता है। अतः जैन दर्शन ऐसे शाश्वत आनन्द की चर्चा करता है जो अनन्त अव्याबाध सुख का दिग्दर्शन कराता है। सम्यक् तप उसको प्राप्त करने का सुदृढ़ आलम्बन है। अनशन, ऊनोदरी, भिक्षाचर्या, रसपरित्याग, कायक्लेश एवं प्रतिसंलीनता ये 6 बाह्य और प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग ये 6 आन्तरिक तप हैं। बाह्य तप आन्तरिक तप हेतु मार्ग प्रशस्त करते हैं। तप की शृंखला में वैयावृत्त्य नवम तथा आन्तरिक तपों में तीसरे स्थान पर है। वैयावृत्त्य वही कर सकता है, जो भूख, प्यास, स्वाद, सर्दी-गर्मी, नींद आदि त्याग कर विनय, अपनत्व एवं निःस्वार्थ भाव से सेवा में तत्पर हो। इसमें बिना आकांक्षा, केवल विसर्जन करना है। चाहे वह समय , शक्ति, क्षमता या सम्पत्ति हो उसको वेयावृत्त्य में लगाने से उसे ऐसा अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त होता है, जिसे वह स्वयं ही अनुभव कर सकता है।

वैयावृत्त्य का तात्पर्य :

जैन दर्शन के अनुसार वैयावृत्त्य का तात्पर्य है- **'गुणवद्दुखोपनिपाते निरवद्येन विधिना तदपहरणं वैयावृत्त्यम्''** सर्वार्थसिद्धि 6/24

गुणीजनों पर दुःख पड़ने पर निरवद्य विधि से दुःख दूर करना वैयावृत्त्य है।

जो उवयरदि जदीणं उवसग्गजराइ-खीण-कायाणं।
पूयादिसु णिरवेक्खं वेज्जावच्चं तवो तस्स॥

उपसर्ग पीड़ित या वृद्धावस्था में क्षीणकाय साधुओं का निरपेक्ष होकर उपचार करना वैयावृत्त्य है।-कार्तिकेयानुप्रेक्षा 459

अतः वैयावृत्त्य बिना किसी फल की इच्छा से की गई सेवा हैं। एक

तपस्वी संत नंदीषेणजी के द्वारा कृत सेवा की प्रशंसा देवलोक में इन्द्र ने की। तब किसी देवता के मन में परीक्षा लेने की सूझी। वे एक ग्लान रोगी संत बनकर किसी जीर्ण शीर्ण स्थानक में बैठ गये तथा नंदीषेण मुनि को समाचार पहुँचा दिया कि कोई रोगी तपस्वी संत स्थानक में आये हुए हैं उनके पास कोई सेवा करने वाला नहीं है। नंदीषेण शीघ्र वहाँ पहुँचे और निवेदन किया- भगवन्! यह स्थान उपयुक्त नहीं है, मैं आपको उस स्थान में ले जाने आया हूँ जहाँ मैं ठहरा हुआ हूँ। उन्होंने कहा- मैं चल नहीं सकता। विनयपूर्वक निवेदन किया कि आप मेरे कंधों पर बैठ जाइये, मैं आपको धीरे-धीरे ले जाऊँगा। उस देवता को तो उनकी परीक्षा लेनी थी। वे कंधे पर बैठ गये तथा अपना शरीर भारी भरकम भी बना डाला। उस संत से बहुत धीरे-धीरे चला जा रहा था। मार्ग भी उबड़ खाबड़ था और मायावी संत नंदीषेणमुनि को बार-बार टोकते हुए जल्दी चलने को उकसा रहे थे। थोड़ी देर में उन्होंने लघुशंका कर दी। फिर भी वे शान्त भाव से संत के प्रति सहानुभूति रखते हुए चल रहे थे। अब तो उन्होंने बदबू देती हुई पतली बड़ी नीत कर दी, जो नंदीषेण मुनि के शरीर पर टपक रही थी, लेकिन संत चिन्तन करते हुए चल रहे थे। उनको बहुत तकलीफ हो रही है, जल्दी स्थानक ले जाकर साफ कर दूँ। बीच में उतारूँगा तो रात्रि का अवसान होने वाला है, बीच में कहीं ठहरने की जगह नहीं है। रास्ता ऊबड़-खाबड़ था, अतएव पैर डगमगा रहे थे। लेकिन बहुत संभाल कर उनको बड़े आदर के साथ ले चल रहे थे। फिर भी वे मायावी संत डाँटते हुए अपशब्द बोलने लगे, एक दो थप्पड़ और मुक्के भी मार दिए। मायावी संत जितना उनको क्रोधित होकर बड़बड़ाते हुए कष्ट देने का प्रयास करते उतना ही वे उनके शीघ्र स्वस्थ होने की मंगल कामना करते हुए बड़े विनीत भाव से चिन्तन करते जा रहे थे। भावों की इतनी शुद्धि हो गई कि रास्ते में ही उनको केवलज्ञान हो गया। यह वैयावृत्त्य का ऊँचा शिखर है, जहाँ अहंकार तिरोहित होकर विनय भाव में परिवर्तित हो जाता है। चिन्तन नकारात्मक से सकारात्मक हो जाता है। बुराई में भी अच्छाई निकालने की कला आ जाती है।

वैयावृत्त्य किनका करें :

वैयावृत्त्य करते समय जाति, लिंग, भाषा, मनुष्य, जीवजन्तु, ऊँच-नीच, बड़े-छोटे का भाव नहीं होता। जिसको भी दुःखी देखते हैं, हृदय द्रवित

होकर कुछ करने को आतुर हो जाता है। जिसके हृदय में अनुकम्पा/करुणा होती है, वह आत्मभूतेषु सर्वेषु यानी अपनी आत्मा के समान दूसरों की आत्मा को मानकर सेवा एवं सहयोग में जुट जाता है। तीर्थंकर भगवान् शान्तिनाथजी ने अपने मेघनाथ के पूर्वभव में कबूतर की रक्षा हेतु अपने शरीर का माँस काट कर तराजू में रख दिया और अन्त में स्वयं भी तराजू में बैठ गये।

शास्त्र में तो कथन मिलता ही है, किन्तु वर्तमान में भी ऐसे कई संत-मुनिराज एवं महासतियाँ जी महाराज विद्यमान हैं, जो रात-दिन अपने गुरुकी सेवा में तत्पर रहते हैं।

आयरियमाईए वैयावच्चसि दसविहे
आसेवणं जहाथाम-वैयावच्चं तमाहियं॥

-उत्तराध्ययन सूत्र

आचार्यादि, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, ग्लान, शिष्य, साधर्मिक, कुल, गण और संघ ये दश वैयावृत्त्य के उत्कृष्ट पात्र बतलाये हैं। उपसर्ग, व्याधि, परीषह आदि आ पड़ने पर इनकी उपाश्रय, आहार, पानी, औषध आदि द्वारा अथवा शारीरिक श्रम से परिचर्या करना वैयावृत्त्य है। क्योंकि इनकी सेवा करने से उनके द्वारा सद्धर्म का विस्तार होगा। माता-पिता, सास-श्वसुर, भाई-बहिन, परिवार, समुदाय, समाज आदि सेवा अथवा वैयावृत्त्य के मध्यम पात्र समझे जा सकते हैं। माता-पिता ने तो पाल-पोष कर बड़ा किया है। इसी प्रकार सास-श्वसुर ने भी परिवार की बड़ी सेवा की है। उनकी सेवा कर हम बच्चों को भी सेवा एवं सद्गुणों के संस्कार दे सकते हैं। घर में माता-पिता, सास-श्वसुर बीमारी से तड़फ रहे हैं और हम धार्मिक अनुष्ठान में लग जायें यह न तो व्यावहारिक है और न वास्तविक धर्म। इससे तो परिवार में कलह का वातावरण निर्मित हो सकता है तथा बच्चे धर्म से उपेक्षित भी हो सकते हैं। दीन-दुःखी, विकलांग आदि की वैयावृत्त्य या सेवा भी इसी श्रेणी में आ सकती है। आदरणीय डी.आर. मेहता साहब विकलांगों के मसीहा बन तन, मन एवं धन से उनकी सेवा में निरन्तर लगे हुए हैं। वे रात दिन इसी के लिये भाग दौड़ करते हैं। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति बिल क्लिटंन ने अपने आपको पूर्ण रूप से गरीबों, दीन-दुःखियों, बीमारों की सेवा में समर्पित कर दिया है। क्योंकि उनको लगता है कि-

वही है जिन्दगी जो नाम पाती भलाई में।
खुदी को छोड़कर जो पहुँच जाती खुदाई में।
मिसाले बुलबुला है, जिन्दगी दुनियाँ ये फानी है,
जो तुझसे हो सके, कर ले भलाई जिन्दगानी में।।

वैयावृत्त्य कौन कर सकता है?

भगवती आराधना में वैयावृत्त्य करने वाले में निम्नलिखित गुण बतलाये हैं - 1. गुण-ग्रहण परिणाम, 2. श्रद्धा, 3. भक्ति, 4. वात्सल्य, 5. पात्रता की प्राप्ति, 6. विच्छिन्न सम्यक्त्वादि का पुनः सन्धान, 7. तप, 8. पूजा, 9. तीर्थ अव्युच्छित्ति, 10. समाधि, 11. जिनाज्ञा, 12. संयम, 13. सहाय, 14. दान, 15. निर्विचिकित्सा, 16. प्रवचन प्रभाकर, 17. पुण्य संचय, 18. कर्त्तव्य निर्वाह।

इन गुणों से सम्पन्न अथवा इनमें से कतिपय गुणों वाला व्यक्ति ही वैयावृत्त्य कर सकता है। गुणिजनों एवं जरूरतमंदों के प्रति वात्सल्य, भक्ति एवं कर्त्तव्य भावना होने पर ही सेवा की जा सकती है। वैयावृत्त्य करने वाला किसी अपेक्षा की पूर्ति हेतु सेवा नहीं करता। यदि वह ऐसा करता है तो वह सेवा नहीं सौदा है, जहाँ कुछ देकर बदले में प्राप्त किया जाता है, उससे प्राप्त सुख क्षणिक इन्द्रधनुष की भाँति होता है। लेकिन वास्तविक वैयावृत्त्य/सेवा का आनन्द अवर्णनीय होता है। पाँच सितारा होटल में खाने का आनन्द एक दिन रह सकता है। लेकिन किसी भूख से तड़फते हुए को भोजन करवाकर जो सुख मिलता है, वह जब-जब भी स्मरण में आयेगा, आन्तरिक संतोष तथा आनन्द प्रदान करेगा।

ऐसी सेवा वही कर सकता है, जो अपनी सुख-सुविधा की परवाह न करते हुए दूसरे के आँसू पौंछने में ही आनन्द पाता है। उसमें सेवा का जुनून होता है।

वैयावृत्त्य का महत्त्व/ आनन्द :

'वैयावृत्त्य का आनन्द' कुछ अटपटा लग रहा होगा, क्योंकि वैयावृत्त्य करने वाले को तन, मन अथवा धन कुछ देना ही होता है। उससे कैसे आनन्द मिल सकता है? यह प्रश्न हमारे दिमाग में हो सकता है, लेकिन जो दिल से समर्पण भाव से सेवा करते हैं, उन्हें दूसरों को देने में ही आनन्द आता है। आज भौतिक प्रगति से प्रभावित संसार इसके आनन्द को शायद अस्वीकार करे,

क्योंकि वह तो स्वार्थ केन्द्रित होना सिखाता है, आत्मकेन्द्रित नहीं। स्वकेन्द्रित व्यक्ति केवल अपनी प्रगति एवं सुख-सुविधा के लिये ही सोचता है, चाहे वह खुशी हजारों को कब्र में दफना कर मिले। नकली दवाइयाँ बेचने वाले, वस्तु में मिलावट करने वाले इसी श्रेणि में आते हैं। जब ठोकर लगती है तब उन्हें अक्ल आती है। लेकिन तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। एक दवा विक्रेता सांप के जहर उतारने की अच्छी दवा बेचता था। सब जगह उसका नाम था, लेकिन लोभ ने आ घेरा। उसने अब नकली दवा बनानी प्रारम्भ कर दी, खूब कमाने लगा। एक दिन उसके बेटे को ही सांप काट गया। असली दवा बंद हो चुकी थी, नकली दवा काम न कर सकी। लड़के के प्राण पखेरू उड़ गये। **"अब पछताये होत क्या जब चिड़िया चुग गई खेत।"** इसी प्रकार अन्यायी, अत्याचारी, आतंकवादी, अंध-विश्वासी व्यक्ति केवल अपने बारे में सोचता है, लेकिन जब खुद के सिर पर पड़ती है तब कोई उसका हितैषी नहीं रह जाता।

वैयावृत्य करने वाला तो दूसरों के लिये सुख की कामना करता है। उनके लिए अपनी सुख-सुविधा, धन-सम्पत्ति सबको न्यौछावर कर सकता है। विश्व के प्रथम स्थान पर रहे धनकुबेर वारेन बफट एक छोटे से मकान एवं पुरानी कार का उपयोग कर शेष सम्पूर्ण सम्पति ट्रस्ट के नाम कर आनन्द की अनुभूति कर सकते हैं और दूसरी ओर स्वार्थी सन्तान अपने माँ-बाप का खर्चा भी न उठा सकने का बहाना बना स्वयं आलीशान कोठी में रहते हुए उन्हें वृद्धाश्रम में भेजने में भी नहीं हिचकिचाते। जिन्होंने उनके बचपन में आँसू पोंछे, वे आज अपने माँ-बाप के आँखों में आँसुओं की धार देखकर भी नहीं पिघलते हैं, क्योंकि वे लेना जानते हैं देने के सुख का उन्हें एहसास भी नहीं है।

वैयावृत्य के सुख से परिचित गांधीजी धनिकों की कोठियों में नहीं, हरिजन एवं कोढ़ियों की बस्ती में रहना पसन्द करते थे। वैयावृत्य करने वाले श्रावक जिनशासन की जाहोजलाली के लिये रात-दिन खड़े रहते हैं और संत मुनिराज भी अपने से बड़े, स्थविर, गुरु आदि की सेवा में दिन-रात एक कर देते हैं, फिर भी मुँह पर शिकन नहीं होती। क्योंकि उनका लक्ष्य है-

खुशियाँ देके बाँट सकूँ अले जमीं को।
दर्द दे तो दे दिल है छुपाने को॥

-संयोजक, अखिल भारतीय आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर (राज.)

युवा-स्तम्भ

धर्म कहाँ से शुरू होता है?

श्री रणजीत सिंह कूमट

एक धर्म सभा में प्रश्न पूछा गया कि धर्म की शुरुआत कहाँ से होती है?

"उत्तर आया कि धर्म प्रारम्भ होता है- सामायिक, नवकार मंत्र, पूजा-पाठ, तप आदि करने से।" ऐसे उत्तर इसलिये मिलते हैं, क्योंकि जनमानस में यह धारणा बनी हुई है कि धर्म कुछ करने की चीज़ है या धर्म क्रिया-काण्ड में ही निहित है।

वास्तव में धर्म का संबंध या जुड़ाव अनुभूति, भावना एवं अंतरंग से है और इस दृष्टिकोण से धर्म की शुरुआत तब होती है जब हम अपने आपको स्वयं के लिये जिम्मेदार समझना शुरु कर दें। अधिकांश में हम अपनी परिस्थिति, असफलता आदि के लिये दूसरों को जिम्मेदार मानते हैं एवं उनको दोष देते हैं। जब तक हम स्वयं को जिम्मेदार नहीं मानते हैं तब तक अपनी ओर न देखकर बाहर की तरफ ही देखते हैं और अपनी परिस्थितियों के लिये दूसरों में ही दोष ढूँढते हैं। जब हम अपनी परिस्थिति के लिये अपने आपको जिम्मेदार मानना शुरु करते हैं तब हम स्वयं की ओर देखना प्रारम्भ करते हैं और यहीं से धर्म की शुरुआत होती है।

कहा भी है, **"जैसा बोओगे वैसा पाओगे" (As you sow, so shall you reap)** इसका अर्थ यही है कि अपने कृत्यों के लिये तुम ही जिम्मेदार हो। भगवान् महावीर ने जब कहा कि "तू ही अपना मित्र है और तू ही अपना शत्रु है" तो इस वाक्य में उन्होंने धर्म का सार भर दिया। अपनी परिस्थिति या सुख-दुःख के लिये किसी अन्य को दोषी न मानकर अपने आप को ही जिम्मेदार मानो अन्यथा सारा जीवन दूसरों के दोष ढूंढने में ही बीत जायेगा। जब तक हम अपने दोष को देखना नहीं सीखेंगे तब तक हम अपने दोषों को सुधार नहीं पायेंगे और हमारी प्रगति नहीं होगी। अतः अपनी प्रगति के लिये, स्वयं के उत्थान के लिये स्वयं को जिम्मेदार समझना शुरु करें और तब ही जीवन में धर्म की शुरुआत होगी।

जब हम अपनी परिस्थिति के लिए दूसरों को जिम्मेदार मानते हैं तो न केवल अन्य व्यक्तियों वरन् अन्य संस्थाओं जैसे सरकार, समाज, जाति, और यहाँ तक कि भगवान् को भी नहीं छोड़ते और सारा दोष व्यक्ति, समाज, संस्था,

भगवान् पर डाल कर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री मान लेते हैं। यदि परिस्थिति अच्छी है तो स्वयं को श्रेय देते हैं, परन्तु जब खराब होती है तो तकदीर, भगवान् या किसी अन्य को दोषी मानते हैं। जब तक हम दूसरों को जिम्मेदार मानते हैं, हम दूसरों से लड़ाई करते हैं, उन्हें दोषी करार देते हैं और वैमनस्य रखते हुए बदला लेने की भावना रहने से सदा तनाव में रहते हैं। जिससे वैमनस्य है उसका बुरा ही सोचेंगे, भला कैसे सोच सकते हैं? जब तक हम बुरा सोचने में लगे हैं अथवा वैमनस्य के भाव में हैं, तब तक धर्म भाव कैसे जागृत हो सकता है? धर्म की पहली शुरूआत है कि हम किसी के प्रति बुरा न सोचें, बुरा न करें और बुरा न बोलें, यह तब ही संभव है जब हमारे मन में किसी के प्रति वैर भाव न हो। इसके लिये गांधीजी के तीन बंदर का उदाहरण उपयुक्त है, जिसमें एक बंदर ने आँख बंद कर रखी है ताकि बुरा न देखे, दूसरे ने मुँह बंद कर रखा है ताकि बुरा न बोले और तीसरे ने कान बंद कर रखें हैं ताकि बुरा न सुने। यह नकारात्मक पक्ष है, परन्तु महत्त्वपूर्ण है। इससे आगे एक अधिक महत्त्वपूर्ण कदम है सकारात्मकता का, कि हम सबका भला सोचें, सबसे भला बोलें और सबका भला करें। इसके लिये मन में सब के प्रति प्रेम भाव जाग्रत करें।

वैर का अभाव और प्रेम का आविर्भाव ही धर्म का प्रारम्भ है–

धर्म के बारे में कुछ शास्त्रीय कथन हैं, जो धर्म की परिभाषा देते हैं जैसे– ''वत्थुसहावो धम्मो'' अर्थात् वस्तु का स्वभाव ही धर्म है। यहाँ भी बल 'स्व' पर है। स्व के भाव को 'स्वभाव' कहा है। यदि हमारा स्वभाव ही धर्म है। तो प्रश्न है कि हमारा स्वभाव क्या है? हम निश दिन लड़ते रहते हैं, झूठ बोलते हैं, धन कमाने में लगे रहते हैं, तो क्या यह हमारा स्वभाव है? हम क्रोध करते हैं, लोभ करते हैं, हिंसा करते हैं, क्या यह हमारा स्वभाव है? तनिक हम ठहर कर देखें व सोचें कि हम क्रोध में कितनी देर रहते हैं और शान्ति में कितनी देर रहते हैं? क्या हम दिन भर झूठ बोलते हैं या अधिकतर सच बोलते हैं? यदि हम दिन भर झूठ बोलें तो हमारा काम नहीं चलेगा। जब भूख लग रही है और घर पर आप खाना माँगों, इस बात को यदि झूठ माना जाय तो खाना कोई परोसेगा क्या? रेलवे स्टेशन पर टिकट लेते वक्त पूछे कि आपको कहाँ का टिकट चाहिये और आप झूठ बोलेंगे तो गन्तव्य स्थान पर जा पायेंगे क्या? वास्तविकता यह है कि हम अधिकतर सच बोलते हैं केवल लोभ या भयवश झूठ बोलते हैं। यदि हम दिन भर क्रोध करें तो जिन्दा नहीं रह सकते। थोड़ी

देर बाद क्रोध शान्त हो जाता है और तब हम कहते हैं कि हम 'सामान्य' हो गये हैं। अतः हमारी 'सामान्य' दशा क्रोध नहीं है, सामान्य दशा अक्रोध है। क्रोध विभाव दशा है और शान्त दशा में बने रहना स्वभाव है। सत्य बोलना स्वभाव है, चोरी न करना स्वभाव है, अतः स्वभाव में रहना ही धर्म है। इसीलिये निर्देश है कि स्वभाव में स्थित रहो, यह ही धर्म है। स्व में स्थित होना ही 'स्वस्थ' होना कहलाता है, यद्यपि साधारण अर्थ में स्वस्थ का अर्थ नीरोगता किया जाता है।

'स्व' में स्थित होने के लिये 'स्व' को जानना आवश्यक है। 'स्व' क्या है? स्व शरीर नहीं है। शरीर के पीछे और इससे से भी परे कुछ है जो अनुभूति से ही ज्ञात हो सकता है। अनुभूति कौन कर रहा है? अनुभूति या अनुभव करने वाला कौन है? अनुभूति प्राणी या जीव ही कर सकता है, अजीव नहीं। जो अनुभूति करता है वह जीव है और यह जीव ही 'स्व', चेतना या आत्मा है। चेतना को जानना या अनुभूति करना, चेतना में स्थित होना और चेतना में बने रहना ही चेतनता है। चेतनता की अनुभूति न होना जड़ता है जो अजीव का लक्षण है।

चेतनता का मुख्य लक्षण है–अनुभूति। स्वयं के दुःख या पीड़ा को तो हम शीघ्र अनुभूत कर लेते हैं, परन्तु हमारे साथी प्राणियों की पीड़ा को अनुभूत कर सकें तब ही हमारी चेतनता सजग कहलायेगी, अन्यथा जडवत् ही रहेगी। हम हमारे साथी प्राणियों के दुःख का अनुभव कर सकते हैं या नहीं, सहानुभूति जगती है कि नहीं? अनुकम्पा या दया भाव जगता है कि नहीं? तब ही हम समझ पायेंगे कि हम चेतन हैं या जडवत्।

भगवान् महावीर के बारे में बताते हैं कि वे जन्म से ही नहीं गर्भ से तीन ज्ञान (मति ज्ञान, श्रुत ज्ञान व अवधि ज्ञान) के धनी थे। जिस व्यक्ति को तीन ज्ञान प्रारम्भ से ही उपलब्ध हो, उसको अन्तिम ज्ञान, केवल ज्ञान या परम ज्ञान, प्राप्त करने में 12 वर्ष क्यों लगे? इसका उत्तर है कि भगवान् महावीर अपनी चेतना को इतनी सूक्ष्म व संवेदनशील बनाने में लगे रहे कि हर प्राणी का छोटे से छोटा दुःख उनकी चेतना या अनुभूति में आ जाये। इसीलिये वे अनार्य प्रदेश में गये जहाँ बहुत असंवेदनशील लोग रहते थे, जिन्होंने उन्हें बहुत कष्ट दिये। दुःखों को सहनशीलता से सहन कर अपनी संवेदनशीलता को प्रकृष्ट बना लिया। संवेदनशीलता, सहानुभूति, अनुकंपा ही चेतना के मुख्य लक्षण हैं और इन्हीं को 'सम्यक्त्व', जो मुक्ति मार्ग की प्रथम सीढी है, का लक्षण बताया है। धर्म के मार्ग

पर प्रथम आवश्यकता , संवेदना, अनुकंपा, प्रेम और सहानुभूति की है और यहीं से धर्म प्रारम्भ होता है। इसके लिये किसी क्रिया-काण्ड की आवश्यकता नहीं है। संवेदनशील बन कर प्रेम एवं आत्मीयता बरतने से आत्म-बोध हो जायेगा। इसी से व्यक्ति संबुद्ध बन स्वाधीन एवं जीवित-मुक्त अवस्था (जीवित रहते हुए मुक्त अवस्था) को प्राप्त कर लेगा।

-सी-1703, लेक कॉसल, हीरानन्दानी गार्डन, पवई, मुम्बई-400076

बनना है मुझे भगवान

श्री त्रिलोकचन्द जैन

विहरण की मनोहर वेला में
चिन्तनशीलता लिए मन से
निकल रहे प्रभु प्रार्थना के स्वर
कब तक प्रभु इस संसार में भटकूगाँ?
कब तक इस कषाय दावानल में झुलसूँगा?
कब आयेगी इन्द्रिय विषयों से अनासक्तता?
क्रोध, मद, माया लोभ में कब आयेगी मन्दता?
घर कुटुम्ब, परिवार से कब छूटेगी आसक्तता?
मन के भावों में कब आयेगी पवित्रता?
अब प्रभु आप कृपा का वर्षण हो,
अब शुभ कर्मों का उदयन हो,
पुरुषार्थ से भावों में परिवर्तन हो,
चिन्तन कर आत्म मंथन हो,
धाय माँ बन कर्तव्य संसार का निभाऊँ,
जलज के संसार पंक से ऊपर उठ जाऊँ
हृदय से प्रभु के गुणों को नित प्रति गाऊँ
वैराग्य का अन्तर में स्थान, कर्मों से करूँ घमासान,
साधु का पाऊँ गुणस्थान,
बनना है मुझे भगवान.....

-156, आई.एच.एस. कॉलोनी, बजरिया, सवाई माधोपुर (राज.)

अध्यात्म

सद्गुण : आत्मा का स्वभाव

श्री कन्हैयालाल लोढा

गुण प्राणी की देन नहीं, स्वाभाविक निधि हैं। इसलिए किसी भी प्राणी में गुण प्रकट होते है, किन्तु उत्पन्न नहीं होते। दोष उत्पन्न होते हैं। दोष व्यक्ति की भूल से होते हैं। अतः दोष को दूर कर निर्दोष होने का दायित्व व्यक्ति का है। अंशमात्र भी दोष रहते प्राणी दोषी ही कहलाता है। जैसे कोई व्यक्ति दिनभर में सैकड़ों बार सत्य बोलता है, परन्तु एक-दो बार झूठ बोलता है तब भी वह सत्यवादी नहीं, मिथ्याभाषी कहलाता है। मनुष्य असंख्य प्राणियों की हत्या नहीं करता है, किसी एक व्यक्ति की हिंसा करता है फिर भी अहिंसक नहीं कहलाता है, हिंसक कहलाता है। कोई व्यक्ति अगणित वस्तुओं में से एक वस्तु की चोरी करता है, शेष की चोरी नहीं करता है फिर भी चोर कहा जाता है। अहिंसक होना, सच बोलना, चोरी न करना, इसके लिए उसे कोई प्रयत्न, प्रवृत्ति व श्रम नहीं करना पड़ता है, ये सब दोषों के त्याग से सहज, स्वाभाविक स्वतः होते हैं। अतः ये उसकी देन नहीं हैं। परन्तु हिंसा, झूठ, चोरी आदि समस्त दोष व्यक्ति की प्रवृत्ति से व श्रम से होते हैं। अतः ये व्यक्ति की उपज हैं और इन्हें दूर करने का दायित्व व्यक्ति पर है। दोषों के मिटते ही गुण स्वतः प्रकट हो जाते हैं। गुण प्रकट करने के लिए श्रमसाध्य उपाय नहीं करना पड़ता है।

'स्वभाव' शब्द स्व और भाव से बना है। स्व का अर्थ है अपने आप से, स्वतः और भाव का अर्थ है अस्तित्व या होना। अतः स्वभाव का अर्थ है जो सदैव स्वतः विद्यमान है। स्वभाव का विलोम शब्द विभाव है, जिसका अर्थ है जो किसी अन्य के निमित्त से उत्पन्न हुआ है और उसका नाश अवश्यंभावी है। यही बात पुण्य-पाप पर लागू होती है। पुण्य है- आत्मा की पवित्रता और पाप है आत्मा की अपवित्रता। पवित्रता स्वभाव सिद्ध है, स्वतः प्राप्त है और अपवित्रता प्राणी की भूल से पैदा होती है। यही

कारण है कि जितनी-जितनी अपवित्रता, दुष्प्रवृत्ति, दोष, पाप मिटते जाते हैं उतनी ही पवित्रता स्वतः प्रकट होती जाती है। पाप के त्याग से ही आत्मा पवित्र होती है जिससे पुण्य की उपलब्धि होती है। जितना पाप का त्याग होता जाता है उतना पुण्य स्वतः प्रकट होता जाता है, यह सिद्धान्त पुण्य तत्त्व के लिए है। परन्तु पुण्य कर्म का अनुभाग बंध कषाय के क्षीण होने से, दोषों के त्याग से, आत्मा की पवित्रता से होता है। जैनागमों में कहीं भी पुण्य के त्याग का व्रत लेने के पाठ का विधान नहीं है, अपितु सर्वत्र पाप व दोष को ही त्याज्य कहा है, पाप के त्याग का ही विधान है। साधक के लिए पाप को त्यागने का ही दायित्व है, पुण्य तो पाप के त्याग से स्वतः अभिव्यक्त व उपार्जित होता है। पाप प्राणी के स्वभाव या प्रकृति की देन नहीं है, अपितु पाप प्राणी अपनी भूल से करता है। अतः भूल को मिटाने का दायित्व प्राणी पर है। पाप के क्षय से ही गुण प्रकट होता है। गुण पैदा होने से पाप नष्ट होते हैं, ऐसी बात नहीं है, क्योंकि गुण स्वभाव है, पैदा नहीं होता है। यह नियम है कि जो पैदा होता है वह नष्ट होता है। गुण स्वभाव है। स्वभाव का अभाव कभी नहीं होता है। जिसका अभाव होता है वह विभाव है। विभाव पैदा होता और नष्ट होता है। विभाव प्राणी की भूल से होता है अतः मिटाया जा सकता है। विभाव का अभाव होना ही स्वभाव का प्रकट होना है। विभाव से स्वभाव नष्ट नहीं होता है, अपितु दबता है, तिरोहित होता है या आवरित होता है। अर्थात् प्राणी अपनी भूल से जब दोष, दुष्प्रवृत्ति, पाप करता है तब गुण तिरोहित व आवरित हो जाते हैं। अतःदोष या पाप के मिटने से, त्याग से गुणों का प्रादुर्भाव हो जाता है। दोष मुक्त होना ही मुक्त अवस्था है, मुक्ति है। अतः प्राणी का दायित्व गुण पैदा करने का नहीं, अपितु दोषों के त्यागने का है। दोष का त्याग ही साधना है, धर्म है। दुष्प्रवृत्ति ही दोष है। दुष्प्रवृत्ति के त्याग से स्वतः सद्प्रवृत्ति होती है, इसके लिए कोई प्रयत्न नहीं करना पड़ता है। सद्प्रवृत्ति निर्दोषता की, धर्म की, आत्म-पवित्रता की, पुण्य की सूचक है।

-82/127, मानसरोवर, जयपुर (राज.)

बाल-स्तम्भ

कर्मफल

सुनयना गेलड़ा

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 5 सितम्बर 2009 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-250 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-200 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 150 रुपये तथा 100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

जैन धर्म में ही नहीं, अपितु अन्य धर्मों में भी एक बात का उल्लेख है कि'जो जैसा कर्म करता है उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है।' अच्छे कर्मों का अच्छा फल और बुरे कर्मों का बुरा फल कभी न कभी निश्चय ही प्राप्त होता है।

एक बार की बात है। एक गाँव में एक साधु रहता था। वह साधु उस गाँव में भिक्षा मांगकर अपना गुजारा करता था। भिक्षा मांगते समय वह कहता- ''भले-भलाई बुरे-बुराई कर देखो रे भाई'' अर्थात् जो किसी का भला करता है उसका भला होता है और जो किसी का बुरा करता है उसका बुरा होता है।

एक बार गांव की एक बुढ़िया ने सोचा कि यह साधु रोजाना भीख मांगने आ जाता है, क्यों नहीं इसे मार दिया जाए जिससे यह फिर कभी भी भीख मांगने नहीं आयेगा। बुढ़िया ने दो लड्डू बनाए एवं उनमें ज़हर मिला दिया। जब साधु उस बुढ़िया के द्वार आया तो उस बुढ़िया ने दोनों लड्डू उसे दे दिए। साधु उन लड्डूओं को लेकर अपनी कुटिया में चला गया। भिक्षा के दौरान आई अन्य भोज्य सामग्री खाकर उसने लड्डुओं को पात्र में रख दिया और सोचा कि यह सुबह खा लूँगा। इसके पश्चात् साधु सो गया।

रात बहुत अंधेरी थी। मौसम में परिवर्तन के कारण तेज हवाएँ चल रही थीं। उधर से दो नौजवान जो कि सैनिक थे, अपने घर लौट रहे थे। अंधेरी रात होने के कारण उन्हें मार्ग में कठिनाइयाँ आ रही थीं। नौजवानों ने साधु की कुटिया का द्वार खटखटाया और कहा- "हे बाबा! मौसम बहुत खराब हो रहा है। आज रात हमें आप अपनी कुटिया में शरण दे दीजिए।" साधु ने उनको अन्दर बुलाकर विश्राम करने के लिए स्थान दे दिया। नौजवान बोले- "हे बाबा, आपके पास कुछ खाने को है क्या? हमें बहुत भूख लगी है।" साधु ने कहा- "मेरे पास केवल ये दो लड्डू हैं, जिन्हें तुम चाहो तो खा सकते हो।" दोनों नौजवान एक-एक लड्डू खाकर सो गए। सुबह साधु बाबा उठे और उन्होंने उन नौजवानों को जगाया। लेकिन जब दोनों नौजवान नहीं उठे तब साधु को लगा कि वे दोनों मर गए हैं। साधु कुटिया से बाहर निकलकर जोर-जोर से बोला-

"भले-भलाई बुरे-बुराई कर देखो रे भाई,
एक माई ने लड्डू दिए मर गए दो सिपाही।।"

सभी गांव के लोग अपने घरों से बाहर आए और उन दोनों नौजवानों को देखने लगे। बुढ़िया भी अपने घर से बाहर आई और नौजवानों को देखते ही दंग रह गई। वह उसी के दो बेटे थे, जो सेना में लड़ने के लिए गए हुए थे। जब उसे पूरी बात का पता चला तो उसे बहुत पछतावा हुआ। अपने द्वारा कृत बुरे कर्मों का बुरा फल पाकर उसने अपने दोनों बेटो को खो दिया और सदा के लिए दुःखी हो गई।

-पुत्री श्री महेन्द्र कुमार गेलड़ा
जैन कॉलोनी, बोरावड़, जिला-नागौर-341502

प्रश्न :-

1. 'जैसा कर्म वैसा फल' उक्ति को चरितार्थ करने वाली कोई घटना लिखें।
2. बुढ़िया को अपने बुरे कर्मों का बुरा फल किस प्रकार मिला?
3. आपके घर कोई सदैव भीख माँगने आता है तो आप क्या करते हैं?
4. युवा, वृद्धा, भीख, रास्ता के समानार्थक शब्द लिखिये। (कथानुसार)
5. कहानी को नया शीर्षक दीजिये।

स्वास्थ्य विज्ञान

स्वास्थ्य हेतु आवश्यक जीवन शैली

डॉ. चंचलमल चोरडिया

शरीर, मन और आत्मा को विकारों से मुक्त रखकर अपने जीवन के लक्ष्य को पाने के लिये, प्रत्येक चिन्तनशील मानव को यथा संभव पूर्ण सजगता एवं विवेक के साथ अपने आपका संतुलन रखना चाहिए। हमारी जीवन शैली में प्राथमिकता के आधार पर प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों का पालन आवश्यक होता है, जो शरीर को असंतुलित होने से बचाता है। उन नियमों का जितना-जितना पालन होगा, उतना-उतना हमारा जीवन स्वस्थ, सुखी एवं शांत होगा। उन बातों का पालन करने के उपरान्त भी यदि प्रत्यक्ष परोक्ष कारणों से अथवा भूत की भूलों, असावधानी या वर्तमान की असजगता के कारण अगर रोग के लक्षण प्रकट हो भी गये हों तो उन सिद्धान्तों के अनुरूप जीवन शैली से उपचार अत्यधिक प्रभावशाली हो जाता है, रोग से मुक्ति मिल सकती है। परन्तु ठीक इसके विपरीत जाने-अनजाने में जितना-जितना हम उन नियमों का उल्लंघन करते हैं तो बहुत प्रयास करने के बावजूद भी न केवल हम रोग ग्रस्त ही होते हैं, अपितु कोई भी चिकित्सा पद्धति हमें स्वस्थ रखने का दावा नहीं कर सकती।

1. प्रत्येक व्यक्ति को निद्रा त्यागते ही सर्वप्रथम अपने आराध्य का स्मरण कर प्राणिमात्र के प्रति मैत्री, करुणा, दया एवं अनुकंपा की भावना भानी चाहिए तथा उनके स्वस्थ, सुखी एवं शांतिमय जीवन की मंगल कामना करनी चाहिए। उस दिन अपने किसी अवगुण को छोड़ने का दृढ़ संकल्प लेकर अपनी दिनचर्या का प्रारम्भ करना चाहिए।
2. प्रातःकाल जितना जल्दी सूर्योदय से पूर्व निद्रा त्याग सकें, त्यागना चाहिये एवं शान्त खुले वातावरण में टहलना, व्यायाम, आसन, प्राणायाम, स्वाध्याय और ध्यान करना चाहिए। व्यायाम में रीढ़ के घुमावदार व्यायाम, आसन में वज्रासन, गोदुहासन, पद्मासन एवं ताड़ासन का अवश्य समावेश करना चाहिये, जिससे शरीर का संतुलन, मांसपेशियों में लचीलापन बना रहता है। चन्द मिनटों के लिए खुलकर हंसना, जोगिंग

करना भी बहुत लाभप्रद होता है।

3. स्वास्थ्य की आज सारी समस्याओं का मूल सही दृष्टिकोण का अभाव, आत्म नियन्त्रण की कमी, स्वछन्द मनोवृत्ति, असंयम, बढ़ती हुई आकांक्षाएँ, धैर्य एवं सहिष्णुता का अभाव, विवेक की कमी, प्राथमिकताओं का गलत चयन एवं सम्यक् लक्ष्य का अभाव होता है। अतः हमारी जीवन शैली यथा संभव संयमित, नियमित, अनुशासित, स्वावलम्बी, श्रम प्रधान, अहिंसक, सात्त्विक एवं सम्यक् चिन्तन से युक्त विवेकमयी भी होनी चाहिये। प्राथमिकताओं का चयन और उनकी क्रियान्विति क्षमताओं के सम्यक् उपयोग एवं महत्त्व के अनुरूप होनी चाहिए। प्रवृत्तियाँ करते समय मन, वचन और काया के सम्यक् तालमेल के साथ आत्मा की उपेक्षा न हो, इस बात की सजगता रखनी चाहिए।

4. तनाव पैदा करने वाले वातावरण से यथा संभव दूर रहना चाहिए, अथवा उस समय मौन हो जाना तथा सकारात्मक सोच रखकर स्वविवेक, सजगता एवं धैर्य रखने का प्रयास करना चाहिए। घर में अनुशासन, प्रेम, तालमेल और सहयोग का वातावरण होने से स्वतः प्रसन्नता एवं शांति मिलती है। तनावमय वातावरण न होने से रोग होने की संभावनाएँ बहुत कम हो जाती हैं। टी.वी. का उपयोग यथासंभव ज्ञानवर्धक कार्यों तक ही सीमित रहना चाहिए। परिवार में मितव्ययता, उपलब्ध सुविधाओं का अनावश्यक दुरुपयोग और अपव्यय न हो ताकि धन उपार्जन हेतु अनैतिक साधनों का उपयोग न करना पड़े।

5. अपनी दिनचर्या का निर्धारण इस प्रकार करना चाहिए, जिससे शरीर के अंगों की क्षमताओं का अधिकतम उपयोग हो सके। अर्थात् जिस समय जिस अंग में प्रकृति से अधिकतम प्राण ऊर्जा का प्रवाह हो, उस समय उस अंग से संबंधित कार्यों को प्राथमिकता देनी चाहिये।

6. शरीर की मूलभूत आवश्यकताओं के रूप में भोजन, पानी, हवा, धूप आदि जो भी ग्रहण करते हैं, उनसे उत्पन्न ऊर्जा पूर्ण सदुपयोग करने हेतु सजगता रखनी चाहिए। अर्थात् यथा संभव मंद परन्तु गहरा पूरा श्वास लेना और निकालना चाहिए। हम वही भोजन अथवा अन्य भोज्य पदार्थ मुख से

ग्रहण करें, जो सात्त्विक हो तथा जिसका पूर्ण पाचन आसानी से हो सके। रात्रि भोजन यथा संभव न करें।

7. हमारा खान-पान, रहन-सहन, और वेष-भूषा मौसम के अनुकूल होनी चाहिए।
8. सप्ताह अथवा पन्द्रह दिनों में कम से कम एक दिन उपवास कर पाचन तंत्र को आराम देना चाहिये।
9. यथा संभव पानी को छानकर, उबालकर अथवा सफेद कांच के बर्तनों में सूर्य से तप्त कर पीना चाहिए।
10. एक्यूप्रेशर स्वास्थ्य परीक्षण और उपचार की सरलतम विधि है। अतः प्रतिदिन पगथली और हथेली में आगे पीछे दबाव देकर रोगग्रस्त प्रतिवेदन बिन्दुओं की जाँच कर लेनी चाहिए तथा दर्दस्थ केन्द्रों पर उपचार कर विजातीय तत्त्वों को वहाँ से दूर कर देना चाहिये।
11. प्रातःकालीन खुली आँखों से उदित सूर्य की रश्मियों को नियमित ग्रहण करना स्वास्थ्यवर्धक होता है, जिसकी अवधि धीरे-धीरे 30 से 35 मिनट बढ़ानी चाहिये।
12. रोग होने की अवस्था में प्रतिदिन अथवा सप्ताह में कम से कम एक बार अपने नाभि, मेरूदण्ड, गर्दन, पैरों आदि का संतुलन देख लेना चाहिये और उसमें गड़बड़ हो तो उसे तुरन्त ठीक कर लेना चाहिये।
13. मल, मूत्र जैसी शरीर की नैसर्गिक विसर्जन क्रियाओं को जबरदस्ती नहीं रोकना चाहिये।
14. हमारा आवास और कार्यस्थल यथा संभव स्वच्छ, प्रदूषण रहित, जहाँ सूर्य की रश्मियाँ आवश्यक मात्रा में प्रवेश पा सकें, ऐसा होना चाहिए। कमरों में दीवारों के रंग तथा साज सज्जा के सामान उत्तेजना एवं भय पैदा करने वाले न हों।
15. यथा संभव अपने शिवाम्बु का अवश्य नियमित सेवन करना चाहिये, जिससे शरीर की प्रतीकारात्मक क्षमता बढ़े एवं आन्तरिक सफाई हो सके। रोगावस्था में उसके अन्य उपयोग भी लेने चाहिए।

16. सप्ताह में कम से कम एक बार सूर्यमुखी तेल का गंडूस कर लेना चाहिए, जिससे रक्त में आए विकार दूर हो जाते हैं। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। रोगावस्था में नित्य करना चाहिए।
17. नित्य हाथ, पैर तथा शरीर के अन्य सभी जोड़ों को तथा गर्दन के जोड़ों को कम से कम 5-7 बार धीरे-धीरे जितना घुमाया जा सके, सभी तरफ घुमाना चाहिए।
18. सद्-साहित्य के स्वाध्याय, चिन्तन, मनन हेतु नियमित समय निकालना चाहिए।
19. रात्रि में निद्रा लेने से पूर्व अपने आराध्य का स्मरण कर, अपने दिन भर के कार्यकलापों की समीक्षा करनी चाहिए और मन, वचन एवं काया से किये गए गलत आचरण का प्रायश्चित्त करना चाहिये। हम ही हमारे सच्चे निरीक्षक, समीक्षक और परीक्षक होतें हैं। दोषों का स्मरण करने से भविष्य में उनसे सरलता पूर्वक छुटकारा पाया जा सकता है।

-चोरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.)
E-mail : cmchordia.jodhpur@gmail.com

अहिंसात्मक चिकित्सा पद्धतियों पर आधारित प्रथम वेबसाइट प्रारम्भ

अहिंसात्मक चिकित्सा पद्धतियों के विशेषज्ञ डॉ. चंचलमल जी चोरडिया ने प्रभावशाली, स्वावलम्बी, अहिंसात्मक चिकित्सा पद्धतियों की जानकारी जन-मानस को कराने हेतु तथा उन्हें उनके उपयोग की प्रेरणा देने हेतु एक वेबसाइट **www.chordiahealthzone.com** प्रारम्भ की है। इस वेबसाइट में चोरडिया जी ने प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों पर आधारित, सहज, सरल एवं स्वयं द्वारा की जाने वाली चिकित्सा पद्धतियों की विस्तृत जानकारी प्रदान की है। वेबसाइट को पूरा पढ़ने से किसी भी रोग का स्वतः इलाज स्वयं द्वारा किया जा सकता है। चोरडिया जी द्वारा प्रकाशित विभिन्न पुस्तकों की भी संक्षिप्त जानकारी इस वेबसाइट में दी गई है।

जीवन-व्यवहार

मच्छर की जयणा

श्री जे.के. संघवी

छोटी सी काया वाले मच्छर से कौन परिचित नहीं? कान के समीप मच्छर की गुनगुनाहट संगीत स्वर सी गूँजती है। मच्छर का डंक निद्रा में बाधा उत्पन्न करता है। मच्छर ही मलेरिया जैसी बीमारी द्वारा बिस्तर पर लोगों को सुला देता है। वह हमारे लिए उपद्रव न करे तथा हमारे द्वारा हिंसा न हो, इन दोनों आशय से मच्छर की उत्पत्ति का निवारण ही सर्वश्रेष्ठ है।

मच्छर की काया कोमल होती है। उठते-बैठते तथा करवट बदलते समय असावधानी के कारण मच्छर मर जाते हैं। वस्तु के लेने रखने में असावधानी के कारण भी मच्छर मर जाते हैं। पंखे की चपेट में आकर भी ये मर जाते हैं। खुले बर्तन में रहे आहार-पानी, तेल, दूध के बर्तन आदि में मच्छर गिरकर मर जाते हैं। अग्नि, गरम रसोई या गरम पानी में गिर जाने से भी मच्छर मर जाते हैं।

मच्छर की विराधना से बचने के लिये निम्नांकित बातों को ध्यानपूर्वक पढ़िये-

- सूर्यास्त के कुछ समय पूर्व खिड़की, दरवाजे आदि बंद रखने से मच्छर घर में प्रवेश नहीं करते हैं।
- घर में तथा इर्द-गिर्द, बिल्कुल गंदगी न रहे, इसका विवेक रखें।
- खिडकियों में बारीक जाली लगा देने से मच्छर को घर में प्रवेश करने से रोक सकते हैं।
- मच्छरों की संख्या बढ़ने लगे तब पुराने समय में नीम के पत्तों का धुआँ करते थे जिससे कि मच्छर दूर भाग जाते हैं।
- मच्छरदानी बांधकर सोने से मच्छरों के उपद्रव तथा विराधना से बचा जा सकता है। किन्तु मच्छरदानी ऐसी हो जिसमें मच्छर न फंसे।
- कोई भी वस्तु लेते या रखते समय मच्छर दब न जाय, इसका ध्यान रखें।
- आहार-पानी, तेल, दूध, सब्जी के बर्तन खुले न रखें।

- गर्म पानी को ठंडा करते समय बर्तन के ऊपर जाली ढककर रखें।
- मच्छर मारने की दवा उपयोग में न लें और मारने की अन्य चेष्टाएँ नहीं करें।
- घर के पास तुलसी का पौधा रखने से मच्छर नहीं आते।
- नीम का तेल शरीर पर लगाने से मच्छर काटते नहीं।
- मच्छर को दूर करने के लिये जन्तुनाशक दवायें नहीं छिड़कायें, उसमें घोर हिंसा है। उसी प्रकार मोस्क्वीटो मेट भी नहीं वापरें, उसमें पेलिथ्रिन नामक जन्तुनाशक दवा आती है उसके धुंए से मच्छर तो मरते हैं, किन्तु मानव के आरोग्य के लिये भी वह धुंआ अत्यंत घातक है। मच्छर अगरबत्तियाँ भी जहरीली रसायनों के कारण उतनी ही नुकसानदायक हैं।
- गुग्गल, लोबान, कंद्रुप, कडवे नीम के पत्ते, संतरे के छिलके का धुंआ करने से मच्छर चले जाते हैं।
- संतरे का तेल शरीर पर लगाने से मच्छर उपद्रव नहीं करते।
- आक के सूखे पत्तों के धुएं से भी मच्छर दूर हो जाते हैं।
- कपूर के टुकड़े भी कमरे में रख देने से मच्छर चले जाते हैं।
- 10 ग्राम नीम के पत्ते, पाँच दाने मरी एवं सप्रमाण खड़ी शक्कर के मिश्रण का सेवन 21 दिन तक नियमित करने से मच्छर उपद्रव नहीं करते, ऐसा कुछ जानकारों का कथन है।
- लोंग का तेल एवं मालकांगणी के तेल का मिश्रण शरीर पर लगाने से मच्छर उपद्रव नहीं करते।
- स्नान के वक्त नींबू के छिलके त्वचा पर घिसने से मच्छर उपद्रव नहीं करते।
- ब्ल्यू अथवा गहरे रंग के कपडे, दीवार, पर्दे वगैरह से मच्छर आकर्षित होकर आते हैं, ऐसे रंग पसंद नहीं करें।
- सिट्रोनेला तेल की थोड़ी बूंदे पानी में डालकर उस घोल में डूबोकर-रिबिनें घर में अलग-अलग कोने में लटका देवें, मच्छर भाग जायेंगे।
- घर के सामान-वस्तुओं को अस्त-व्यस्त मत रखिए। खुले कपड़े, थैले, बेग में मच्छर भर जाते हैं।

प्रेरक-प्रसंग

पछतावा रह गया

आर. प्रसन्नचन्द चोरडिया

श्रावण का महीना एवं राखी का दिन था। सुबह-सुबह एक बीमार गरीब ब्राह्मण आया। रामा-सामा करने के बाद उसने कहा- "भाभुसा! आपने दवा दिलाने के लिए एक दानदाता के पास भेजा था, अपनी बीमारी व तकलीफ की सारी बातें सुनाने के बाद भी उन्होंने दवा दिलाने से इन्कार कर दिया।" मैंने कहा- "ठीक है, अगर वे नहीं देते तो उनकी इच्छा - मैं क्या कर सकता हूँ।"

फिर उसने धीरे से कहा- "भाभुसा! सावन का महीना है- राखी है, ब्राह्मण का बेटा हूँ- आप कुछ कर देते तो".... उसकी बात पूरी सुने बिना ही मैंने बीच में ही टोका और जोर देकर कहा- "अभी तुम जाओ। मैं कुछ नहीं कर सकता।" बेचारा चुपचाप मुँह लटकाते हुए चला गया। मैं देखता रहा।

उस समय सुबह के लगभग 11.30 बजे होंगे। मैं दुकान में आया ही था- कुछ काम में मशगूल था। सुबह-सुबह उसके आने से थोड़ा अव्यवस्थित हो गया था।

इतने में एक सहधर्मी बूढ़ी माँ सा, पैरों से थोड़ी लाचार, लाठी टिकाती हुई आई। वे अधिकतर राखी के त्यौहार पर घेवर के साथ कुछ सहयोग ले जाती है। उनका आना मुझे सुहाता था। पर उस दिन न मालूम क्या हुआ, उन्हें भी मैंने इन्कार कर दिया। वे कुछ निराश और थोड़ी उदास होती हुई चली गई। न मालूम यह कौनसी मनहूस घड़ी थी जब मेरी संवेदना सूख कर कांटा हो गयी थी। मेरे स्वभाव- मेरे व्यवहार में बदलाव आ गया था। मैं अक्सर एक ट्रस्ट के बारे में कहा करता हूँ कि-

जो भी हमारे पगोतिये पर चढ़ जायेगा।
आने वाला कभी खाली हाथ नहीं जाएगा।।

पर आज अपने ही घर के दरवाजे से किसी को खाली हाथ लौटा दिये जाने से मन अनमना हो गया था, खिन्न हो गया था। लोग कितनी उम्मीद ले कर, आशा लेकर, विश्वास के साथ हमारे पास आते हैं। अपना दर्द समझने वालों के

सामने ही कोई अपने मन के मर्म की, दुःखदर्द की पोटली खोलता है। अपने मन की व्यथा कहता है। उनकी मजबूरी ही हमारे पास खींच ले आती है। अन्यथा कौन किसके दरवाजे पर जाने को राजी होता है। मन्नत मांगने जाता है।

करीब 1.30 बजे जब मैं भोजन के लिए बैठा तो उस ब्राह्मण का चेहरा आँखों के सामने मंडराने लगा। उन माँ साहब का हताशा व निराशा से लटका हुआ चेहरा घूमता दिखाई देने लगा।

फिर उस ब्राह्मण की जहाँ-जहाँ बैठक थी, वहाँ-वहाँ बुलाने के लिए आदमी भेजा। एक-दो जगह फोन किया। पर वह नहीं मिला। अब क्या करें? तरकस से तीर निकल चुका था। डोरी हाथ से छूट गई थी। अब सिर्फ पछतावा रह गया था।

गुजर गया है वक्त पछतावा रह गया।
कोरा था मन, कोरा ही रह गया।।

पर आगे के लिए एक सबक सिखा गया। घर पर आने वालों को बैठाओ, ठंडा पानी पिलाओ, फिर उसकी बात धैर्य से सुनो, उसकी समस्या का समाधान करने की कोशिश करो। उसके दुःख दर्द को जितना कम कर सकते हो करो, और सहृदयता से जो कुछ भी बन पड़े, चुपचाप अपने हाथों से कर दो। अन्यथा आज की तरह हाथ में सिर्फ पछतावा ही रह जायेगा।

- 52, कालाथी पिल्लई स्ट्रीट, चेन्नई- 79

वचनामृत

1. क्लेश उत्पन्न हो, ऐसा शब्द नहीं बोलना चाहिए।
2. रोग उत्पन्न हो, ऐसा भोजन नहीं करना चाहिए।
3. कर्जा हो, इतना खर्च नहीं करना चाहिए।
4. पाप बढ़े, ऐसा काम नहीं करना चाहिए।
5. भाषा का अल्प उपयोग करने की कला प्राप्त करोगे तो अन्तरात्मा में सुन्दरता आएगी।

-संकलन : आनन्दराज जी. जैन

कविता

पाँच अभिगम पालें

डॉ. दिलीप धींग

(अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् के पाँच अभिगम राष्ट्रीय अभियान के लिए अध्यक्ष श्री कुशल जी गोटेवाला की प्रेरणा से रचित)

प्रभु दर्शन में, मुनि दर्शन में, अविनय दूषण टालें।
पाँच अभिगम पालें।।

प्रबल पुण्य से मिले योग का पूरा लाभ उठा लें।
पाँच अभिगम पालें।।

त्याग सचित्त को बोध कराता, जीवाजीव को जानें।
धर्म अहिंसा तत्व ज्ञान से, निज चेतन पहिचानें।
प्राणिमात्र के प्रति करुणा का मंगल भाव जगा लें।
पाँच अभिगम पालें।।1।।

जो अचित्त है उन चीजों का भी विवेक रखना है।
मान और सामान छोड़कर, आत्म-स्वाद चखना है।
भारमुक्त तन-मन से होकर आगे कदम बढ़ा लें।
पाँच अभिगम पालें।।2।।

ज्यों ही दर्शन का क्षण आए, उत्तरासंग लगाएँ।
देव, गुरु और धर्म के प्रति, श्रद्धाभाव जगाएँ।
भाषा समिति वचन गुप्ति से, जीवन सफल बना लें।
पाँच अभिगम पालें।।3।।

अहोभाग्य दर्शन गुरुवर के, स्वतः हाथ जुड़ जाएँ।
बना अंजलि शीश लगाकर वन्दन से झुक जाएँ।
विनयभाव से आत्मभाव के सुर संगीत बजा लें।
पाँच अभिगम पालें।।4।।

गुरुदेव की पावन मिश्रा, मन एकाग्र बनाएँ।
धर्म-ध्यान की, आत्म-ज्ञान की, बातों में रम जाएँ।
उनके बतलाए आदर्शों को जीवन में ढालें।
पाँच अभिगम पालें।।5।।

पाँच अभिगम पाँच रत्न हैं, जीवन का सच्चा धन।
मर्यादा का बोध कराते, प्रगटाते अनुशासन।
पालें शिष्टाचार बना लें तम सारे उजियाले।
पाँच अभिगम पालें ।।6।।

-53, डोरे नगर, उदयपुर-313002 (राज.)

प्रेरक-प्रसंग

जीवन की सार्थकता

श्री आनन्द राज जी. जैन

संत एकनाथ किसी गाँव से गुजर रहे थे। वहाँ उन्हें एक आदमी मिला, जिसने कहा-"नाथ जी, आपका जीवन कितना सुंदर, कितना शांत है। मेरा जीवन खींचतान, झगड़े, काम-क्रोध और ईर्ष्या से भरा हुआ है। मैं भी आपके जैसा जीवन जी सकूँ, उसका कोई उपाय बताएँ।" एकनाथ जी बोले, यह सब रहने दो, तुम्हारी मृत्यु समीप है। आज से आठ दिनों के बाद तुम्हारी मृत्यु होने वाली है। इतना कहकर एकनाथ चले गए। वह आदमी बहुत घबराया। उसे हर घड़ी अपनी मृत्यु दिखाई देने लगी। वह अपने पड़ोसियों के पास गया और बोला- मित्रों, मैं अब तक आपसे झगड़ता रहा उसके लिए मुझे क्षमा करें, अब आठ दिनों में मैं मरने वाला हूँ। उसने अपनी पत्नी से कहा- मैंने नाहक तुम्हें कष्ट दिए, तुम्हारे हृदय को सैकड़ों बार वेदना पहुँचाई। मुझे क्षमा कर दो। उसने अपने बच्चों को छाती से लगाया और बोला- "मैंने तुम्हारे साथ नाहक मारपीट की, मेरे बच्चों! अब मैं जाने वाला हूँ। गाँव में उसने जिनके साथ लड़ाई झगड़े किए थे, उन सभी के पास गया और सबसे मांफी माँगी। उसने सबके पैर छुए। आठ दिन बाद एकनाथ उस व्यक्ति के घर पधारे। वह नाथ जी के पैरों में गिरा और बोला, मेरा समय आ गया है क्या? एकनाथ बोले यह तो प्रभु जानें, पर तुम्हारे यह आठ दिन कैसे गुजरे? कितनों से झगड़ा किया, कितनों का अपमान किया? उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, कैसा झगड़ा और कैसी लड़ाई? मुझे तो मेरी आँखों के सामने बस मौत दिखाई दे रही थी। सबसे क्षमा मांगता रहा, गई गुजरी भूलने को सबसे कहता रहा। लड़ने-झगड़ने का तो समय ही नहीं मिला। एकनाथ ने कहा-"इन आठ दिनों में जिस बात को ध्यान में रखकर तुमने सबके साथ बर्ताव किया, उस बात को मैं हर क्षण साथ रखता हूँ। इस देह का गुलाम न बनें। सभी से मधुर बोलें, सभी पर प्रेम रखें, जो खुद के पास है, उसमें से दूसरों को दें। जीवन सफल एवं सार्थक हो जाएगा।"

-ई-2/13, जलनिधि सोसायटी, बंगार नगर, लिंक रोड़, शोपिंग सेन्टर के सामने, गोरेगाँव (प.) मुम्बई-90

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

श्री नन्दी सूत्रम्- अनुवादक- आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा., ***प्रकाशक*** - सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर (राज.) ***पृष्ठ***- 363, ***मूल्य***- 40 रुपये, ***संस्करण***- द्वितीय, सन् 2009

नन्दी का अर्थ ज्ञान होता है। नन्दीसूत्र में पाँच ज्ञानों का विवेचन हुआ है। नन्दीसूत्र का प्रथम संस्करण सन् 1942 में सतारा से प्रकाशित हुआ था। यह द्वितीय संस्करण शब्दार्थ, भावार्थ एवं विवेचन से संयोजित है। सुज्ञ श्राविका सौ. मंगला जी चोरड़िया एवं सुश्री नेहा जी चोरड़िया ने गुरु सन्निधि का सहकार लेकर इस संस्करण को विशिष्ट बनाया है। नन्दी सूत्र का यह संस्करण जिज्ञासु पाठकों के लिए सुग्राह्य एवं विशिष्ट बन पड़ा है। नन्दी सूत्र के हार्द को इसमें निर्युक्ति आदि के आधार पर स्पष्ट किया गया है।

रात्रि भोजन त्याग आवश्यक क्यों? - ***लेखिका***- साध्वी स्थितप्रज्ञा श्री, ***प्रकाशक***- पार्श्वनाथ विद्यापीठ, I.T.I. रोड़, करौंदी, वाराणसी। ***पृष्ठ***-48, ***मूल्य***- 20/- रुपये, ***संस्करण***- प्रथम, सन् 2009।

रात्रि भोजन का त्याग जहाँ साधु-साध्वी के मूल गुणों में सम्मिलित होता है, वहाँ गृहस्थ श्रावक-श्राविकाओं के लिए यह उत्तर गुण माना गया है। रात्रि भोजन का त्याग क्यों आवश्यक है, इसे प्रस्तुत लघु पुस्तिका में आध्यात्मिक लाभ की दृष्टि से, यौगिक विकास की दृष्टि से, वैज्ञानिक दृष्टिकोण से, पर्यावरण की दृष्टि से, पारिवारिक लाभ की अपेक्षा से, स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से तथा अहिंसा लाभ की दृष्टि से समझाया गया है। रात्रि भोजन-त्याग विषयक एक पुस्तक आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के व्याख्यानों के आधार पर सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर द्वारा भी प्रकाशित है।

दो कदम लक्ष्य की ओर- लेखिका- श्रीमती रतन चोरड़िया, ***प्रकाशक***- श्रीमती रतनकंवर चंचलमल चोरड़िया चेरिटेबल ट्रस्ट, जोधपुर, ***पृष्ठ***- 32, ***मूल्य***-11/- रुपये

यह जीव दुःखों में भटक रहा है, उसका कारण मोह एवं अज्ञान है। संसार का स्वरूप दुःखमय है, इस दुःखमय संसार से किस प्रकार अपने को पृथक् समझकर दुःख मुक्त बनें, इसका सन्देश इस पुस्तक में निपुणता पूर्वक दिया गया है तथा अल्प शब्दों में ममक्ष का मार्ग दर्शन किया गया है।

आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

समस्त संघ सदस्यों को सूचित करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि **परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.** आदि ठाणा 9 के पावन सान्निध्य में **दिनांक 22 सितम्बर से 28 सितम्बर 2009 तक सप्त दिवसीय आध्यात्मिक शिक्षण शिविर अहमदाबाद (गुज.)** में आयोजित किया जा रहा है। इस शिविर में निम्नांकित योग्यता में से एक भी योग्यता प्राप्त संघ सदस्य भाग ले सकेंगे-

1.श्री स्था. जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के स्वाध्यायी हों एवं पर्युषण सेवा देते हों।

2.अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की चतुर्थ परीक्षा उत्तीर्ण हो।

3.सामायिक, प्रतिक्रमण, पच्चीस बोल कण्ठस्थ हो।

4.संघ, संघ की सहयोगी संस्थाओं अथवा संघ शाखाओं के पदाधिकारीगण।

5.जो प्रोफेशनल उपाधि से युक्त हों अथवा उसमें अध्ययनरत हों।

उक्त शिविर में कुशल प्रशिक्षकों द्वारा **अन्तगड़सूत्र वाचन, प्रवचन शैली, भजनकला एवं आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षाओं के पाठ्यक्रम** के साथ ही **आध्यात्मिकता एवं नैतिकता** को पुष्ट करने वाले विविध विषयों का प्रशिक्षण दिया जाएगा। शिविर की नियमावली एवं आवेदन पत्र संलग्न है। संलग्न आवेदन पत्र भरकर 31.8.2009 से पूर्व जमा कराने का लक्ष्य रखें। बिना पूर्व आवेदन पत्र व स्वीकृति के शिविर में प्रवेश सम्भव नहीं होगा। अतः आवेदन पत्र पूर्ण कर यथाशीघ्र प्रेषित करावें तथा स्वीकृति प्राप्त करें। आप इस शिविर में सम्बन्धित विषयों की तैयारी के साथ पधारें, ताकि आपको शिविर में उन विषयों का विशेष ज्ञान प्राप्त हो सके।

शिविर में पधारने पर आपको **परमश्रद्धेय परमपूज्य आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा.** आदि ठाणा 9 तथा **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा.** आदि ठाणा 16 के दर्शन-वन्दन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ भी प्राप्त होगा।

आवेदन-पत्र जमा कराने का स्थान

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक,
जोधपुर-342001 (राज.)
फोन/फैक्स:0291-2636763,
2641445,2624891
E-mail : swadhyaysanghjodhpur@yahoo.co.in

श्री रमेश जी गुन्देचा
R. Gundecha & Co.,
No. 72, II Floor,
Opp. Union Bank Of India,
Avenue Road, Bangalore (K.T.)
Ph. 080-41665581, Fax : 22242419

श्री कस्तुरचन्द जी बाफना
स्वाध्याय भवन
गणपति नगर, व्यंकटेश मंदिर के पीछे
जलगांव-425001 (महा.)
फोन नं. 0257-2232315

श्री लल्लूलाल जी जैन
1/187, आवासन मण्डल
सवाईमाधोपुर-322021 (राज.)
फोन नं. 07462-234680,
मो. 9460441587

शिविर स्थल

श्री एलीसब्रीज स्थानकवासी जैन संघ
'नूतन भवन' जेठाभाई पार्क, बस स्टेण्ड के पास
नूतन नागरिक बैंक के सामने, शान्तिवन, नारायणनगर रोड, पालड़ी,
अहमदाबाद-380007(गुजरात), फोन : 079-26611448
सम्पर्क सूत्र- श्री पदमचन्द जी कोठारी, मोबाइल : 09429303088

नियमावली एवं निर्देश

1. आवेदन पत्र में सारी सूचनाएँ सही एवं स्पष्ट भरें, काँट-छाँट नहीं करें। आवेदन-पत्र की फोटो-प्रति भी भरकर भिजवाई जा सकती है।
2. शिविरार्थियों को दिनांक 22.09.2009 को प्रातः 7 बजे तक शिविर स्थल पर पहुँचना अनिवार्य है।
3. सामायिक, प्रतिक्रमण, 25 बोल अच्छी तरह से कण्ठस्थ कर पधारें, साथ ही शिक्षण बोर्ड की पिछली उत्तीर्ण कक्षा का पाठ्यक्रम याद करके पधारें।
4. सामायिक की वेशभूषा अनिवार्य रूप से साथ लेकर पधारें।
5. कम से कम प्रातः नवकारसी व्रत का पालन तथा रात्रि में तिविहार का पालन आवश्यक है।

6. आओ प्रत्याख्यान करें को नियमित भरना होगा।
7. शिविरार्थी वे ही माने जायेंगे जो नियमों व दिनचर्या का पालन करते हुए पूर्ण शिविर अवधि पर्यन्त शिविरार्थी के रूप में रहेंगे।
8. महिला एवं छात्रा (14 वर्ष से अधिक) शिविरार्थी के लिए निर्धारित वेशभूषा (साड़ी/सलवार कुर्ती) रहेगी।
9. शिविर प्रभारी की बिना अनुमति के शिविर स्थल नहीं छोड़ सकेंगे।
10. शिविरार्थी अपने साथ जोखिम का सामान नहीं लावें।
11. आवेदन-पत्र भरकर जोधपुर संघ कार्यालय या बैंगलोर के पते पर भिजवायें।
12. आपके द्वारा पठित विषयों में जो भी जिज्ञासाएँ हों, उन्हें अलग से नोट करके साथ में लेकर पधारें।
13. शिविरकाल में एक दिन सामूहिक दया व एक दिन सामूहिक एकासना का लक्ष्य है।
14. शिविरार्थियों से अपेक्षा है कि शिविरकाल में एक दिन पौषधोपवास का लक्ष्य रखें।
15. शिविर में पधारने वाले शिविरार्थियों को मात्र बस अथवा रेल का द्वितीय श्रेणी का मार्ग व्यय प्रदान किया जायेगा।

शिविर सम्बन्धी जानकारी के लिए निम्नांकित महानुभावों से सम्पर्क कर सकते हैं- 1. श्री रमेश जी गुन्देचा-बैंगलोर, मो. 09845499907, 2. श्री प्रकाश जी सालेचा-जोधपुर, मो. 9414126279, 3. श्री राकेश जी जैन-बैंगलोर, 09902588801

निवेदक

रमेश गुन्देचा, संयोजक

श्री जैन रत्न शिविर समिति

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ)

घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.), फोन-0291-2636763, 2641445

श्री जैन रत्न शिविर समिति

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ)

घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.), फोन-0291-2636763, 2641445

आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

दिनांक 22 सितम्बर से 28 सितम्बर 2009 तक

आवेदन-पत्र

शिविरार्थी का नाम.....

पिता/पति का नाम.....

जन्म तिथि.....आयु.....

पत्राचार का पूर्ण पता.....

.....

टेलीफोन नं.....मोबाइल.....

फैक्स नं. .....ई-मेल.....

शैक्षणिक योग्यता(व्यावहारिक).....

धार्मिक योग्यता.....

.....शिक्षण बोर्ड की उत्तीर्ण कक्षा.....

पर्युषण सेवा.....

शिविरों में सहभागिता.....

संघ की गतिविधियों में योगदान.....

.....

विशेष रुचि.....

व्यवसाय/सर्विस.....

शिविर में भाग लेने के लिये योग्यता का आधार.....

.....

दिनांक..... हस्ताक्षर आवेदनकर्ता

नोट-आवेदन-पत्र भरकर प्राप्त होने पर स्वीकृति भेजी जाएगी।

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

नियमावली

1. आवेदक को प्रतिदिन 1 नवकार मंत्र की माला जपने का संकल्प करना होगा।
2. आवेदक सदाचारी हो एवं उसे सप्त कुव्यसन का त्याग करना होगा।
3. आवेदक को एक महीने में 5 सामायिक करने का संकल्प करना होगा।
4. आमंत्रित विद्यार्थियों को अ.भा. श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा आयोजित शिविरों में भाग लेना अनिवार्य होगा।

आवेदक की योग्यता : आवेदक की आयु 12 वर्ष से अधिक एवं 30 वर्ष से कम होनी चाहिए। आवेदक रत्न संघ का सदस्य होना चाहिए।

विशेष : छात्रवृत्ति चयन संबन्धी निर्णय चयन समिति का अंतिम एवं सर्वमान्य होगा।

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत छात्रवृत्ति संबंधी महत्त्वपूर्ण नियम

1. सभी विद्यार्थियों को अखिल भारतीय आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर की परीक्षा देना अनिवार्य है।
2. चयन समिति के अनुसार Scheme-I में उन विद्यार्थियों का चयन किया जायेगा जो व्यावहारिक शिक्षण में 70 % और धार्मिक शिक्षण में कम से कम 60% अंक प्राप्त करेंगे।
3. Scheme-I के विद्यार्थी अगर पांचवी कक्षा (धार्मिक) से आगे परीक्षा देने में असमर्थ हैं तो उन्हें पुनः 1 से 5 तक परीक्षा देनी होगी, जिसमें उन्हें 80% अंक लाना अनिवार्य है।
4. Scheme-I में विद्यार्थियों को परिषद् द्वारा आयोजित शीतकालीन या ग्रीष्मकालीन शिविरों में से एक में भाग लेना अनिवार्य है।
5. सभी विद्यार्थियों को इस वर्ष में प्रतिक्रमण पूर्ण करना अनिवार्य है।
6. चयन समिति के अनुसार जो विद्यार्थी Scheme-I में नहीं आता हैं, उसको

Scheme-II में शामिल किया जायेगा।

7. Scheme-II के विद्यार्थियों के लिए परिषद् के द्वारा आयोजित शिविर में आमंत्रित नहीं किया जायेगा।
8. Scheme-II के विद्यार्थियों को स्थानीय शिविर में भाग लेकर उसकी रिपोर्ट चयन समिति के पास भेजना अनिवार्य है।
9. छात्रवृत्ति योजना के अंतर्गत Scholarship Requisition Form के आधार पर चयन समिति के निर्णयानुसार छात्रवृत्ति की राशि प्रदान की जायेगी। छात्रवृत्ति राशि की अधिकतम सीमा सारणी के अनुसार निम्नांकित है।

Class	Upto Class 10th	11th & 12th	Graduation & Post Graduation	Professionl Etc.
MAXIMUM LIMIT	Rs. 6000	Rs. 9000	Rs. 12,000	Rs. 27,500

विशेष : अगर Scheme-II के विद्यार्थी मेहनत करके व्यावहारिक शिक्षण में कम से कम 70% अंक लाते हैं तो परिषद् द्वारा आयोजित शिविर का लाभ मिलेगा।

10. सभी विद्यार्थियों को आचार्य हस्ती मेधावी छातवृति योजना के नियमों का पालन करना अनिवार्य है। यह नियमावली सभी विद्यार्थी अपने पास रखें।

आवेदन पत्र प्रेषित करने का स्थान : इस योजना के संबंध में विशेष एवं सम्पूर्ण जानकारी के लिए सम्पर्क करावें एवं आवेदक छात्र-छात्राएँ अपने आवेदन पत्र को समिति के संयोजक– Sri Budhmal ji Bohra, No. 53, Erullappan Street,Sowcarpet,Chennai-79, Ph. : 044-42728476 के पते पर प्रेषित करें।

आवेदन प्रेषित करने की तिथि : आवेदन पत्र प्रेषित करने की अंतिम तिथि 31 अगस्त है एवं आवेदन पत्र की प्रतिलिपि (Xerox) मान्य होगी तथा वेबसाइट www. jainyuvaratna.org पर आवेदन पत्र डाउन लोड (Download) कर सकते हैं।

समाचार-विविधा

पालड़ी, अहमदाबाद में आचार्यप्रवर के चातुर्मास में धर्म-ध्यान, तप-त्याग की लहर

दो महासतियों के मासखमण एवं मुक्तिप्रभा जी के 41 की तपस्या

परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. आदि ठाणा 9 के सान्निध्य में पालड़ी, अहमदाबाद चातुर्मास में धर्माराधन का ठाट लगा हुआ है। गुजराती भाइयों की बहुलता वाला क्षेत्र होते हुए भी प्रवचन के दौरान अच्छी उपस्थिति रहती है। रविवार को पूज्य आचार्यप्रवर भी प्रवचनामृत फरमाते हैं। प्रतिदिन श्री मनीष मुनि जी म.सा. प्रार्थना करवाते हैं। श्री योगेश मुनि जी म.सा. एवं तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. के निरन्तर प्रेरणादायी एवं तात्त्विक प्रवचन हो रहे हैं। प्रवचन में दशवैकालिक सूत्र की विवेचना चल रही है। दोपहर में निशीथ सूत्र की शास्त्र-वाचना चल रही है। बरवाला सम्प्रदाय के श्रद्धेय श्री शान्तिमुनि जी म.सा. आदि ठाणा 3 संत भी वाचना का श्रवण कर रहे हैं। समागतों के आने का क्रम बराबर बना हुआ है। श्री पदमचन्द जी कोठारी-अहमदाबाद के भ्राता श्री बुधमल जी कोठारी-चेन्नई लगभग 135 सदस्यों का संघ लेकर पूज्य आचार्यप्रवर की पावन सन्निधि में उपस्थित हुए, सबने तीन दिन दर्शन-वन्दन, प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया। आगामी चातुर्मास की विनति की भूमिका की दृष्टि से पाली का संघ पूज्यश्री के चरणों में उपस्थित हुआ। जयपुर के श्रद्धालुओं ने भी अपनी ओर से चातुर्मास हेतु विनति प्रस्तुत की है। जोधपुर का संघ भी 1 अगस्त को चातुर्मास की भावभीनी विनति लेकर उपस्थित हुआ है।

महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. सहित 5 संतों के तथा 3 महासतियाँ जी म.सा. के एकान्तर तपस्या चल रही है। व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा.की 41 की तपस्या पूर्ण हुई है। महासती श्री उदित प्रभा जी म.सा., महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी म.सा. के मासखमण तप पूर्ण हो गए हैं। 25 जुलाई 2009, श्रावण शुक्ला चतुर्थी के मंगल दिवस पर महासती त्रय के मासक्षपण तप के उपरान्त तपाराधना पर अनुमोदनार्थ संत-सतियों ने एवं

आचार्यप्रवर ने जो भावाभिव्यक्तियाँ की है, उनकी कुछ झाँकी यहाँ प्रस्तुत है-

श्रद्धेय श्री मोहनमुनि जी म.सा. ने प्रथम बार अपनी मनोभावना संक्षिप्त शब्दों में रखते हुए कहा- "इकत्तीस का है पूर, कर्म होंगे चकनाचूर, **मुक्ति** मिलेगी मंजूर, **उदित** हुआ है सूर, **ऋद्धि** मिलेगी भरपूर, मेरा अनुमोदन करें स्वीकार।"

श्रद्धेय श्री बलभद्र मुनि जी म.सा. ने कहा कि आत्मा पर विश्वास हो, तब ही तप की साधना हो सकती है। शरीर को भिन्न समझते हुए तप करने पर दृढ़ता आती है और विश्वास बनता है। **श्रद्धेय श्री मनीषमुनि जी म.सा.** ने कहा कि धन्य है तपस्विनी सतीवृन्द, इनकी श्रद्धाभक्ति, साहस एवं पुरुषार्थ। महासतीत्रय ने तपाराधना को प्रधानता देकर आत्मोन्मुखी बनने हेतु इच्छाओं को सीमित कर कर्मों का भंजन किया है। तन मुर्झाये, मन हर्षाये यह तप का लक्षण है। आप तीनों आत्मशोधन कर कषायों का निकन्दन कर, विषयों का वमन कर, आत्ममंथन कर, आत्मरंजन में लीन रहें। **श्रद्धेय श्री योगेशमुनि जी म.सा.** ने इस अवसर पर तीनों महासतियों के प्रथम अक्षर से तीन नियम ग्रहण करने की प्रेरणा की। मुक्तिप्रभा जी के नाम से मैगी के त्याग की, उदित प्रभा जी के नाम से उदित सूर्य के पूर्व में कुछ नहीं लेने की तथा ऋद्धि प्रभा जी के नाम से अपनी ऋद्धि धन-सम्पत्ति को सीमा में बाँधने की प्रेरणा की।

व्याख्यात्री महासती श्री रुचिता जी म.सा. ने 'त' से तत्काल, 'प' से परिणाम मिले वही सच्चा तप है, ऐसी परिभाषा करते हुए काव्य शैली में तप की अनुमोदना की। **महासती श्री रक्षिता जी म.सा.** ने कहा कि तप का ताज आत्मबली ही धारण कर सकता है।

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. ने फरमाया कि जब तक कामना रहेगी, त्याग नहीं होगा। वेदना दो प्रकार से उदित होती हैं,- पहली कर्म का उदय निर्धारित समय पर आता है तब, तथा दूसरी स्वयं कष्टों को आमंत्रित करता है तब। भगवान् महावीर भी इसी भावना से अनार्य देश में गए। आज की तपस्या का योग 93 है और तीनों महासतियों की आयु का योग भी 93 है। महासती श्री उदितप्रभा जी म.सा. का यह पांचवाँ मासक्षपण तप है। महासती श्री मुक्तिप्रभा जी चार मासक्षपण या आगे की तपस्या कर चुके हैं। महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी म.सा. ने साहस कर पहला मासक्षपण किया है। **महान्**

अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. ने आचार्यप्रवर के शासन-व्यवस्था की डोर हाथ में थामने से अब तक हुए संत-सतीवृन्दों के मासक्षपण तप की चर्चा की। उन्होंने फरमाया कि सतियों के तीन मासक्षपण तप पहली बार एकसाथ हो रहे हैं। श्रावक के तप से संयमी का तप विशेष महत्त्व वाला है। गुरु मुखारविन्द से लिए प्रत्याख्यान साताकारी फलित होंगे, ऐसी महासतियों की धारणा रही। व्याख्यात्री श्री सोहनकंवर जी म.सा. के सिंघाड़े ने सार-संभाल रखकर तपाराधना में सहयोग किया। यह शासन की दीप्ति में सहायक है।

परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने फरमाया कि वे धन्य हैं जो वीतराग को देखकर वीतरागी बनते हैं, संतों को देखकर संत बनने का भाव जगाते हैं तथा तपस्वी को देखकर तप में पुरुषार्थ कर आगे बढ़ते हैं। मनोरथ करने वाले कई हैं, आगे बढ़ने का संकल्प लेने वाले कई हैं, पर लिए हुए संकल्प को पार लगाने वाले विरले हैं। महासती त्रय ने जो संकल्प लिया, उसको पार लगाया है। मैंने सती-मण्डल से पूछा कि आप क्या करना चाहते हैं-ज्ञानाराधना की, शास्त्रवाचना की बात सतियों ने रखी, सबसे पहले उदितप्रभा जी ने मासक्षपण की भावना रखी, मुक्तिप्रभा जी ने भी स्वीकृति चाही और ऋद्धिप्रभा जी ने कहा कि सहयोग मिले तो मैं भी करना चाहती हूँ। आज तीनों के इकतीस की तपस्या है। आप करने वालों को देखकर संकल्प करें, आगे बढ़ें। दूसरों की बिल्डिंग, कार, वेशभूषा देखकर वैसा करने की सोचते हैं, क्या तप करने वालों को देखकर भी ऐसी भावना जगती है? आठ साल का एकाशन कर रहा है, साठ साल का खाता है। बत्तीस साल का शीलव्रत ले रहा है, सत्तर साल का देख रहा है।

इस पावन प्रसंग पर श्री शांतिलाल जी लुणावत, पीपाड़ निवासी (वीर पिता श्री ऋद्धिप्रभा जी म.सा.), श्री पुण्यवानचन्द जी खिंवसरा मेहता-जोधपुर ने सदार आजीवन शीलव्रत ग्रहण किए। तप के अनुमोदनार्थ धनोप संघ, धनारी कला, जोधपुर, पीपाड़ सिटी, जयपुर, कोटा, हिण्डौन सिटी, मुम्बई, चेन्नई, रायचूर, बैंगलोर, मैसूर, ब्यावर, पाली, सवाईमाधोपुर आदि अनेक स्थानों से श्रद्धालु भाई-बहिन उपस्थित थे।

उल्लेखनीय है कि महासती श्री उदितप्रभाजी म.सा. एवं महासती श्री ऋद्धिप्रभाजी म.सा. ने 31 की तपस्या के पश्चात् पारणक कर लिया है तथा व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा ने 41 की तपस्या के पश्चात् पारणा किया है।

ब्यावर में तपाराधन एवं ज्ञानाराधन का उत्साह

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 6 का पावस प्रवास सर्वतोभावेन वर्द्धमान है। प्रवचन सभा में व्याख्यान हाल खचाखच भर जाता है। पूज्य श्री सागरमल जी म.सा. एवं पूज्य आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म.सा. की पुण्य तिथि त्याग-तप पूर्वक सोत्साह मनाई गई। बहिनों ने तीन पचरंगी कर उत्साह प्रदर्शित किया है। ज्ञानाराधना के क्रम में बालक-बालिका प्रतिक्रमण और 25 बोल तथा बहिनें कर्म-ग्रन्थ सीख रही हैं। उपाध्याय प्रवर छेदसूत्र एवं व्यवहार की वाचना फरमाते हैं तथा मधुर व्याख्यानी श्री गौतम मुनि जी म.सा. दशवैकालिक की वाचना कर रहे हैं। तप-त्याग की झड़ी लगी हुई है। श्री नन्दलाल जी सांखला चातुर्मास के प्रारम्भ से तेले-तेले पारणा कर रहे हैं। सोनम गोलेच्छा ने प्रथम बार पाँच की तपस्या की है। श्रीमती सुमन कोठारी ने 1 अगस्त को 12 के प्रत्याख्यान किये हैं तथा आगे बढ़ रही है। श्री पूनमचन्द जी दुग्गड़, जयपुर संवर सहित बड़ी तपस्या की ओर अग्रसर हैं। श्रीमती जया भण्डारी ने आठ के प्रत्याख्यान किये हैं। दर्शनार्थी बन्धुओं का आवागमन बना हुआ है। आवास एवं भोजन की व्यवस्था सूरज भवन में संचालित है।

श्राविका मण्डल द्वारा जयपुर में आध्यात्मिक चेतना शिविर आयोजित

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 26 से 28 जून, 2009 तक 'आध्यात्मिक चेतना शिविर' का आयोजन किया गया। शिविर में वात्सल्यमूर्ति एवं श्राविका मण्डल की अध्यक्ष डॉ. मंजुला जी बम्ब ने शिविर की रूपरेखा प्रस्तुत की तथा कहा कि सभी श्राविकाओं को व्यक्तिगत भावनाओं से हटकर संघहित तथा प्रेम के लिए कार्य करना है। शिविर में विभिन्न वक्ताओं ने अत्यन्त हृदयस्पर्शी विचार प्रस्तुत किए। युवक परिषद् के पूर्व अध्यक्ष श्री अशोक जी कवाड़,चेन्नई ने समय-प्रबन्धन पर महत्त्वपूर्ण उद्बोधन दिया। उन्होंने 'महिलाओं की शक्ति और जैन धर्म' विषय पर भी प्रभावी प्रकाश डाला। विशिष्ट साधक श्रावकरत्न श्री नवरत्न जी भंसाली, बैंगलोर ने प्रत्येक श्राविका को ज्ञानवान, आचारवान एवं आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा की। वर्द्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय की निदेशक डॉ. सुषमा जी सिंघवी, जयपुर ने नारी में आध्यात्मिक

चेतना की आवश्यकता पर बल दिया। बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष श्री सुमेरसिंह जी बोथरा ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि श्राविकाओं में परस्पर प्रेम हो, दुआएँ हों और आशीर्वाद हो। दुआओं का महत्त्व बताते हुए उन्होंने कहा-

न जाने दुआओं में कौन साथ देता है।
मैं जब भी डूबता हूँ, समुद्र निकाल देता है ।।

पूर्व अध्यक्ष श्रावकरत्न श्री कैलाशचन्द जी हीरावत ने कहा कि नैतिक जीवन जीने की कला अपने बच्चों को माताएँ सिखा सकती हैं। महारानी गर्ल्स कॉलेज की पूर्व प्राचार्या डॉ. प्रतिभा जी जैन तथा श्राविकारत्न श्रीमती विजया जी मल्हारा, जलगाँव एवं श्रीमती पुष्पा जी मेहता, जयपुर ने भ्रूण हत्या को अमानवीय कृत्य बताया। श्रावकरत्न श्री आनन्द जी चौपड़ा, जयपुर ने वक्तृत्व कला के विकास हेतु उपाय बताये। डॉ. संजीव भानावत, जयपुर ने मीडिया के दुष्प्रभावों की चर्चा की एवं मीडिया के माध्यम से आध्यात्मिक चेतना जागृत करने पर बल दिया। श्री पदमचन्द जी गाँधी ने कुसंस्कारों से बचने की प्रेरणा की। श्री त्रिलोकचन्द जी जैन ने 25 बोलों में से कुछ बोलों को रुचिकर ढंग से हृदयंगम करवाया। श्री संजय जी अग्रवाल, जयपुर ने प्रतिदिन प्रातःकाल ध्यान का अभ्यास करवाया। धार्मिक हाउजी, 25 बोल, अंक-प्रश्नोत्तरी आदि प्रतियोगिताएँ भी करवाई गईं। श्राविकाओं ने प्रातःकालीन एवं सायंकालीन प्रतिक्रमण किया। सभी को आदर्श श्राविका बनने के नियमों तथा श्राविका मण्डल के राष्ट्रीय कार्यक्रम से अवगत कराया गया। वार्षिक साधना कलेण्डर सभी को वितरित किए गए। श्राविकाओं को अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करने हेतु प्रोजेक्ट दिये गए। सभी श्राविकाओं ने निम्नलिखित संकल्प किये-

1. जल ही जीवन है। हम नहाने में एक बाल्टी से अधिक पानी का उपयोग नहीं करेंगे।
2. महीने में चार बार से अधिक घर से बाहर होटल आदि में भोजन नहीं करेंगे।
3. महीने में एक या दो व्यक्तियों की सेवा (धार्मिक, सामाजिक, असहाय जनसेवा) करेंगे।
4. प्रतिदिन एक घण्टे मौन रखेंगे।
5. महीनें में चार रात्रि भोजन का त्याग करेंगे।

6. परिग्रह नहीं बढ़े इसलिए एक वर्ष में साड़ी खरीदने की मर्यादा करेंगे।
7. महीने में पाँच बार बाह्य खाद्य वस्तु मिठाई-नमकीन आदि का त्याग करेंगे।
8. रेशम के कीड़ों द्वारा निर्मित रेशमी वस्त्रों का त्याग करेंगे।
9. महीने में एक धार्मिक पाठ याद करेंगे।
10. महीने में चार सामायिक करेंगे। प्रतिदिन एक सामायिक करने की कोशिश करेंगे।
11. पर्यावरण व प्रकृति को शुद्ध रखने हेतु पूरा ध्यान रखेंगे।
12. भ्रूण हत्या न करेंगे, न करवायेंगे, न अनुमोदन करेंगे।
13. शाकाहार का प्रचार-प्रसार करेंगे। अंडा शाकाहार में नहीं आता-इसका भी प्रचार-प्रसार करेंगे।
14. जीव दया को बढ़ावा देंगे।
15. हिंसा जनित सौन्दर्य प्रसाधन-वस्त्रों एवं चमड़े से निर्मित वस्तुओं का उपयोग नहीं करेंगे।
16. बच्चों को धर्मस्थान ले जाते समय उचित वस्त्रों का पूरा ध्यान रखेंगे।
17. अभिवादन करते समय जय जिनेन्द्र बोलेंगे।

जयपुर श्राविका मण्डल ने राष्ट्रीय शिविर की आवास-प्रवास एवं भोजनादि व्यवस्था में सम्पूर्ण सेवा-व्रत का पालन करते हुए अ.भा. श्री जैन रत्न श्राविका मंडल के सभी कार्यक्रमों में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देकर शिविर को सफल बनाया। इसके लिए कार्याध्यक्ष श्रीमती मधु जी सुराना ने जयपुर श्राविका मंडल की अध्यक्षा श्रीमती उर्मिला जी बोथरा को स्मृति चिह्न भेंट किया।

-श्रीमती मंजुला बम्ब, अध्यक्ष-अ.भा.श्री जैन रत्न श्राविका मंडल

कोटा में श्राविकाओं का शिविर सम्पन्न

श्री वर्धमान जैन श्रावक संघ, कोटा एवं श्री जैन रत्न श्राविका संघ, कोटा के संयुक्त तत्त्वावधान में परम श्रद्धेय आगम मर्मज्ञ आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा चार के सान्निध्य में 13 से 18 जुलाई, 2009 तक श्राविकाओं एवं बालक-बालिकाओं का आध्यात्मिक एवं नैतिक संस्कार शिविर का आयोजित किया गया। महिला शिविरार्थियों को तीन कक्षाओं में विभाजित कर जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड परीक्षा को ध्यान में रखते हुए उनके

पाठ्यक्रमानुसार परीक्षा की तैयारी करवाई गई। इसके अतिरिक्त 25 बोल, 67 बोल, उपयोग एवं संज्ञा के थोकड़े, लघु दण्डक, कर्म प्रकृति आदि के थोकड़े, प्रतिक्रमण सूत्र का अर्थ एवं दशवैकालिक सूत्र के दो अध्ययन की गाथाओं का सरलार्थ एवं भावार्थ समझाया गया। आस-पास के क्षेत्र की कुल 76 महिलाओं ने पूर्ण मनोयोग से शिविर में भाग लेकर ज्ञानार्जन किया। नयी महिला स्वाध्यायियों ने इस वर्ष पर्युषण में सेवा देने हेतु अपनी स्वीकृति प्रदान की। नन्हें-मुन्ने बालक-बालिकाओं को 25 बोल में से 15 बोल एवं सामायिक सूत्र कण्ठस्थ कराये गये तथा विभिन्न प्रतियोगिताओं के माध्यम से सामायिक के उपकरण एवं शुद्ध रीति से वन्दन करने का अभ्यास करवाया गया। कुल 28 बालक-बालिकाओं ने शिविर में पूर्ण उत्साह के साथ भाग लिया।

शिविर में महासती सुश्री प्रभाजी आदि महासतियाँ जी के अतिरिक्त सुश्राविका श्रीमती सुनीता जी नवलखा-कोटा, श्रीमती मोहनकौर जी जैन-जोधपुर, श्रीमती मोहिनी देवी जी जैन-आलनपुर, श्रीमती कान्तिबाई जी-आलनपुर ने अध्यापन कार्य किया। स्थानकवासी जैन संघ कोटा का शिविर की सफल क्रियान्विति में पूर्ण सहयोग रहा। भाई-बहिनों ने प्रतिमाह कोटा शहर में इस प्रकार के शिविर लगाने की भावना व्यक्त की। शिविर का संचालन मोहनकौर जैन, सचिव-श्री स्थानकवासी स्वाध्याय संघ, जोधपुर ने किया।

निबन्ध प्रतियोगिता-परिणाम घोषित

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद के माध्यम से आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के 71वें जन्म दिवस पर आयोजित निबन्ध प्रतियोगिता विषय- **आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. : 'व्यक्तित्व और कृतित्व'** का परीक्षा परिणाम इस प्रकार रहा-

प्रथम- श्री कस्तूरचन्द जी जैन 'अष्टम',खेरलीगंज, जिला-अलवर (राज.)

द्वितीय- श्री अनिल कुमार जी जैन, लाडपुरा, कोटा (राज.)

तृतीय- श्री लक्ष्मीचन्द जी छाजेड़, समदड़ी, जिला-बाड़मेर (राज.)

-राकेश जैन, सुमेरगंजमंडी

तमिलनाडु में 70 केन्द्रों पर बोर्ड की परीक्षाएँ सम्पन्न

श्री जैन रत्न युवक परिषद् चेन्नई के तत्त्वावधान में आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर की कक्षा 1 से 14 तक की धार्मिक परीक्षा दिनाँक 19.07.2009, रविवार को 12.30 से 3.30 बजे तक तमिलनाडु के लगभग 70 केन्द्रों पर सानन्द सम्पन्न हुई। लगभग 1000 परीक्षार्थियों ने परीक्षा में सम्मिलित होकर ज्ञानार्जन किया। लगभग 400 नए परीक्षार्थी एवं 90 अजैन व मुस्लिम परीक्षार्थी सम्मिलित हुए। सभी परीक्षार्थियों को युवक परिषद् चेन्नई की ओर से प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया गया।

परीक्षा के पूर्व युवक परिषद् के कार्यकत्ताओं व केन्द्राधीक्षकों के सहयोग से घर-घर जाकर तथा तमिलनाडु के क्षेत्रों में शिक्षकों व स्थानीय कार्यकर्त्ताओं के माध्यम से प्रचार-प्रसार कर आवेदन-पत्र भरवाये गये, जिसके परिणाम-स्वरूप 10 नए केन्द्र खोले गए। परीक्षा पूर्व सभी परीक्षार्थियों को SMS के माध्यम से सूचना व रोल नम्बर प्रेषित किए गए।

परीक्षा के दिन युवक परिषद् के लगभग 200 कार्यकत्ताओं द्वारा निरीक्षक, पर्यवेक्षक एवं अन्य कार्यों में महत्त्वपूर्ण सेवाएँ प्रदान की गईं। परीक्षा में अनुचित साधनों का उपयोग एवं नकल न हो तथा केन्द्राधीक्षकों व परीक्षार्थियों का उत्साहवर्धन हो इस अपेक्षा से 4 आकस्मिक जाँच दलों **(Squad Team)** का गठन किया गया जिसके माध्यम से चेन्नई के लगभग 30 से 40 केन्द्रों पर जाँच करवाई गई।

तमिलनाडु के प्रत्येक केन्द्र पर परीक्षा तैयारी हेतु अध्यापन की व्यवस्था करवाई जाती है, जिसके अन्तर्गत 3 शिक्षक अपनी सेवाएँ निरन्तर प्रदान कर रहे हैं।

-सुरेश चोरड़िया, सहसंयोजक

आवश्यकता धार्मिक अध्यापक व निरीक्षक की

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर को योग्य, अनुभवी, विनयशील, संस्कारित अध्यापकों/ अध्यापिकाओ की आवश्यकता है, जो अपने क्षेत्र में 2 से 12 वर्ष तक के कम से कम 15-20 बच्चों को एकत्रित करके, बच्चों के समयानुसार 1 घण्टे संस्कार शिक्षा प्रदान कर सकें। यदि आप अध्यापन कार्य में रुचि रखते हैं तो संस्कार केन्द्र से जुड़कर बच्चों को संस्कारवान बनाने में सहयोग दें। आवेदन करने वाले प्रार्थी

व्यावहारिक शिक्षा में कम से कम 10 वीं कक्षा उत्तीर्ण हों तथा आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा उत्तीर्ण कर रखी हो। **सम्पर्क सूत्र व पता–** प्रातः 10.00 बजे से 5.00 बजे तक **संयोजक**–अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र-प्रधान कार्यालय, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.) 0291-2622623/2435637/93511421637 पर सम्पर्क करावें।

स्व. प्रदीपकुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार 2009 के लिए प्रविष्टि आमंत्रित

श्री अ0भा0 साधुमार्गी जैन संघ द्वारा विगत कई वर्षों से उत्कृष्ट साहित्य पर स्व. श्री प्रदीपकुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार प्रदान किया जाता रहा है। वर्ष 2009 हेतु साहित्य पुरस्कार प्रविष्टि सादर आमंत्रित है। यह साहित्य पुरस्कार जैन धर्म, दर्शन, इतिहास, कला एवं संस्कृति तथा जैन साहित्य, काव्य कला, निबन्ध, नाटक, संस्मरण एवं जीवनी आदि के संबंध में लिखित मौलिक ग्रंथ पर दिया जाता है। पुरस्कार स्वरूप संघ द्वारा 51 हजार रूपये नकद, शॉल, श्रीफल व प्रशस्ति पत्र अर्पित किया जाता है।

पुरस्कार चयन के लिये निर्धारित नियम निम्नानुसार हैं :–

1. अन्य संस्थाओं द्वारा पूर्व में पुरस्कृत कृति पर यह पुरस्कार नहीं दिया जाएगा।
2. पुरस्कार हेतु प्रकाशित/अप्रकाशित (पाण्डुलिपि) दोनों प्रकार की कृतियाँ निर्धारित आवेदन पत्र के साथ 15 सितम्बर, 2009 से पूर्व प्रस्तुत की जा सकती हैं। आवेदन-पत्र समता भवन, रामपुरिया मार्ग, बीकानेर (राज.) से प्राप्त कर सकते हैं।
3. प्रकाशित कृति का प्रकाशन वर्ष 2002 से 2009 के मध्य होना चाहिये।
4. पुरस्कार मूल्याकंन के लिये कृति की मुद्रित 4 प्रतियाँ एवं पाण्डुलिपि की 1 प्रति निःशुल्क भेजनी होंगी। कृतियाँ पुनः नहीं लौटाई जायेंगी।
5. अप्रकाशित कृति (पाण्डुलिपि) की प्रति स्पष्ट टंकण की हुई अथवा हस्तलिखित सुवाच्य एवं जिल्द बंधी होनी चाहिये।
6. पुरस्कार हेतु प्रतिभागी विद्वानों के लिये यह आवश्यक होगा कि वे कृति के संबंध में स्वयं की कृति होने एवं इसके मौलिक होने का प्रमाण पत्र कृति के साथ भेजें।

7. पुरस्कार प्रतियोगिता हेतु कृति डॉ. सुरेश सिसोदिया, द्वारा आचार्य श्री नानेश ध्यान केन्द्र, राणाप्रताप नगर, रेलवे स्टेशन के सामने, पद्मिनी मार्ग, उदयपुर(राज.) के पते पर भेजें– **गौतम पारख, राष्ट्रीय महामंत्री**

राजस्थान में 17 अगस्त से 4 सितम्बर तक पशुवध एवं मांस-विक्रय निषिद्ध

जयपुर- राज्य सरकार ने एक आदेश जारी कर दिनाँक 17 अगस्त से 4 सितम्बर, 2009 तक श्वेताम्बर एवं दिगम्बर सम्प्रदाय के पर्युषणों के दौरान राजस्थान प्रदेश में पशुवध एवं मांस-विक्रय पर रोक लगाई है। अब आवश्यक है कि सभी ग्राम-नगरों में इसकी पालना हो।

पशुवध एवं मांस विक्रय पर रोक के लिये करें अपील

सुप्रीम कोर्ट ने 14 मार्च, 2008 शुक्रवार को एक ऐतिहासिक फैसले में गुजरात हाई कोर्ट का वह फैसला पलट दिया, जिसमें जैन पर्व 'पर्युषण' के दौरान नौ दिन तक किसी भी तरह के पशुधन के वध एवं मांस बिक्री पर लगाई रोक को खारिज कर दिया था। जैन पर्व पर गुजरात सरकार द्वारा पशुवध एवं मांस बिक्री पर लगाए प्रतिबंध को सुप्रीम कोर्ट ने सही ठहराया है।

गुजरात सरकार के उक्त आदेश की तरह देश भर में अपने एवं अन्य प्रदेशों में भी पर्युषण पर्व के दौरान पशुवध और मांस विक्रय को पूर्णतः प्रतिबंधित करवाने हेतु जन जागरण हो। इस हेतु प्रबुद्ध एवं विचारशील व्यक्तियों, कर्मठ कार्यकत्ताओं, सक्रिय सामाजिक व धार्मिक संगठनों/संस्थाओं का यह नैतिक दायित्व है कि वे अब अपनी-अपनी कमर कसें। साथ ही स्थानीय प्रशासन एवं राज्य सरकार से अविलंब संपर्क स्थापित कर शासनादेश निर्गमित करवाने हेतु सार्थक प्रयास करें। विभिन्न सांसद, विधायक अन्य जन-प्रतिनिधियों, राजनेताओं, राजनैतिक संगठनों, समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं, इलेक्ट्रोनिक एवं प्रिंट मीडिया आदि के माध्यम से इस प्रयास को गति प्रदान की जा सकती है।

कदाचित् राज्य सरकार के द्वारा ध्यान आकृष्ट कराये जाने के उपरान्त भी इस गंभीर मुद्दे पर ध्यान नहीं दिये जाने पर योग्य कानूनविदों से सत्परामर्श लेकर अपने राज्य के उच्च न्यायालय में सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले

के परिप्रेक्ष्य में निज प्रदेश में पशुवध एवं मांस विक्रय को पर्युषण पर्व के दौरान पूर्णतः बंद किये जाने हेतु जनहित याचिका दाखिल कराई जा सकती है।

-डॉ. नरेन्द्र पारख, ब्यावर

संक्षिप्त समाचार

जोधपुर- रत्नसंघीय परिवारों की रत्नसंघ निर्देशिका का प्रकाशन होने जा रहा है। सभी रत्न बन्धुओं से विनम्र अनुरोध है कि अपने परिवार का विवरण देख लें। अगर किसी भी प्रकार की कोई त्रुटि रह गई हो या कोई संशोधन कराना हो तो दिनांक 11 से 14 अगस्त, 2009 तक सशोधन के लिए सांय 5 से 7.30 बजे तक श्री जैन रत्न युवक परिषद्-कार्यालय, घोड़ों का चौक में सम्पर्क करावें।- फोन नं.- 0291-2636763,2641445

निर्देशिका के सम्बन्ध में सुझाव एवं अधिक जानकारी के लिए निम्न पदाधिकारियों से सम्पर्क कर सकते हैं- **अध्यक्ष**-श्री विरेन्द्र जी भंसाली-98290-46081, **सचिव**- श्री शेखर जी सुराणा-98291-54129

जयपुर- इंडियन रेडिकल ह्यूमनिस्ट एसोशिएशन, जयपुर द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर **'विश्व शान्ति में बाधाएँ'** विषय पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। आप अपना निबन्ध 2500 शब्दों में हिन्दी अथवा अंग्रेजी भाषा में 30 सितम्बर, 2009 तक प्रेषित कर सकते हैं। अपनी प्रविष्टि के साथ पृथक् स्लिप पर नाम, पिता/ पति का नाम, उम्र, व्यवसाय/नौकरी, पिनकोडमय पता, टेलीफोन नं. लिखकर भेजें। निबन्ध में 90 अंक विषय वस्तु के तथा 10 अंक संदर्भ ग्रन्थों के रखे गए हैं। परिणाम 31 दिसम्बर, 2009 तक घोषित कर दिया जायेगा। पुरस्कारों का विवरण इस प्रकार है- **प्रथम**- 5000/-, **द्वितीय**-4000/-, **तृतीय**- 3000/-, **चतुर्थ**- 2000/-, **पंचम**- 1000/- (2), **सांत्वना**- 500/- (16)। प्रतियोगिता सम्बन्धी विस्तृत जानकारी एवं अपनी प्रविष्टि भेजने हेतु सम्पर्क सूत्र- श्री उगमराज मोहनोत, ***Indian Redical Humanist Association, D-90A, Krishna Marg, Bapu Nagar, Jaipur-302015, Tel.-0141-2621275***

इन्दौर- श्री महावीर जैन स्वाध्याय शाला के तत्त्वावधान में 117 दिवसीय ग्रीष्मकालीन धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। शिविर में श्री मोहनलाल जी पिपाड़ा, श्रीमती सुशीला जी बाफना, श्रीमती प्रमिला जी

झांझरिया, श्रीमती निर्मला जी भटेवरा ने अध्यापन कार्य किया। शिविर का समापन श्रमण संघीय प्रवर्तक श्री रमेशमुनि जी म.सा. के सान्निध्य में हुआ। प्रवर्तक मुनि श्री ने कहा कि युवा पीढ़ी में चारित्रिक गुणों के निर्माण की महती आवश्यकता है।

चेन्नई- युवतियों में धार्मिक चेतना जागृत करने के उद्देश्य से 12 जनवरी, 2008 को चेन्नई में श्री जैन रत्न युवती मण्डल की स्थापना की गई थी। यह युवती मण्डल श्रीमती शशि जी कांकरिया की अध्यक्षता एवं श्रीमती अर्पणा जी भण्डारी के मंत्रीत्व में निरन्तर सक्रिय है। प्रति सप्ताह शनिवार को धार्मिक अध्ययन एवं संस्कारों की वृद्धि हेतु कक्षा आयोजित की जाती है। निरन्तर ज्ञानवृद्धि से अमिता जी कवाड़, प्रतिभा जी ओस्तवाल, प्रिया जी खिंवसरा, सुनीता जी खिंवसरा, अनीता जी चोरलिया, शिल्पा जी बाघमार ने विगत पर्युषण पर्व में अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं। आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा में भी युवतियाँ भाग लेती रहती हैं।

बैंगलोर- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की कार्यकारिणी में निर्णय लिया गया है कि बैंगलोर सहित कर्नाटक प्रदेश के विभिन्न ग्राम नगरों में निवास कर रहे रत्नसंघ के बन्धुओं की निर्देशिका बनायी जाए। श्री दशरथमल जी चोरड़िया इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए संयोजक नियुक्त किये गये हैं। अतः सभी बन्धुजनों से निवेदन है कि वे निर्देशिका को तैयार करने में सहयोग करते हुए अपनी सम्पूर्ण जानकारी प्रेषित करने हेतु सम्पर्क करें- श्री दशरथमल चोरड़िया, ***11/1, King Street, Richmond Town, Bangalore-560025, Tel-22213135, 9341718891***

कोटा- जैन स्वाध्याय संस्था, कोटा द्वारा 23 जून से 30 जून तक "श्री जैन धार्मिक, नैतिक शिक्षण संस्कार शिविर" का आयोजन किया गया, जिसमें 150 बालक-बालिकाओं तथा 25 महिलाओं ने भाग लिया।

जोधपुर- ओसवाल जाति का 2466 वां स्थापना दिवस 21 जुलाई को सम्पूर्ण देश में 100 से अधिक महानगरों, राज्य की राजधानियों, नगरों-उपनगरों में विविध कार्यक्रमों के साथ उत्साह, उमंग, हर्षोल्लास एवं परम्परागत ढंग से मनाया गया।

- मिठ्ठूलाल डागा

पनवेल (नवी मुम्बई)- "आचार्य श्री नानेश छात्रावास" में सत्र 2009-10

के लिये 20 स्थान उपलब्ध हैं। जैन छात्रों तथा चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट का कोर्स करने वाले छात्रों को प्राथमिकता दी जायेगी। अन्य उच्च शिक्षा का अध्ययन करने वाले छात्र भी प्रवेश के लिये आवेदन कर सकते हैं। इच्छुक छात्र इस फोन नम्बर अथवा ई मेल पर अतिशीघ्र सम्पर्क करें- फोन नं.- 022-27467340, 09324610630 (मोबाइल), Email : mrfoundtaion@rediffmail.com

भवानी मण्डी- श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन नवयुवक मण्डल, जोधपुर द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर **'जीवन में यतना का महत्त्व'** विषय पर निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। इस विषय पर आप अपने विचार अधिकतम 4 पृष्ठों में लिखकर भेज सकते हैं। प्रतियोगिता में अधिकतम 35 वर्ष के युवा-युवती, भाई-बहिन ही भाग ले सकते हैं। कृपया अपनी निबंध प्रविष्टि के साथ अपनी उम्र का प्रमाण-पत्र भी भिजवाने का कष्ट करें। उपर्युक्त प्रतियोगिता में कुल 37 प्रतियोगियों को पुरस्कृत करने की योजना है, पुरस्कारों का विवरण निम्न प्रकार से रहेगा। **प्रथम**-1101/-(1), **द्वितीय**-501/-(4), **तृतीय**-251/-(11), **सांत्वना**- 101 (21)। निबन्ध प्रविष्टि भेजने की अंतिम तिथि 30 अगस्त 2009 है। प्रतियोगिता संबंधी विस्तृत जानकारी एवं अपनी प्रविष्टि भेजने हेतु सम्पर्क सूत्र- **नितेश नागोता जैन,** महामंत्री-श्री अ.भा.सुधर्म जैन नवयुवक मण्डल, *175-जैन हाउस, ए.के.जैन एंड कंपनी, भवानीमंडी-326502, फोन: 07433-222621, 09413101489, 09887126363 (मो.)*

बैंगलोर- श्रमण संघीय चतुर्थ पट्टधर आचार्य श्री शिवमुनि जी महाराज की प्रेरणा से **''भगवान् महावीर जैन साधु-साध्वी वैयावृत्य समिति''** का गठन किया गया है, जिसके **मार्गदर्शक-** श्री मोहनलाल जी मूथा, **अध्यक्ष-** श्री बाबूलाल जी रांका एवं **मंत्री-** श्री शांतिलाल जी लोढ़ा नियुक्त किए गए हैं।

बधाई/चुनाव

जयपुर- श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक जयपुर संघ, जयपुर की कार्यकारिणी बैठक में दिनांक 12 जून, 2009 को सर्व सम्मति से श्री विनयचन्द जी बम्ब को अध्यक्ष, श्री विजयचन्द जी लोढ़ा को उपाध्यक्ष मनोनीत किया गया एवं श्री मोहनलाल जी मूथा का कार्यकारिणी सदस्य के रूप में सहवरण किया गया।

विलेपार्ले (मुम्बई)- सुश्री कु. प्राची सुपुत्री श्री सुरेश जी भंसाली सुपौत्री स्व. श्री विजयराज जी भंसाली ने NHCET में 79 वां स्थान और HSC में 88% अंक प्राप्त कर अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। गुरु भगवन्तों के प्रति भी प्राची की विशेष श्रद्धा है।

वरली (मुम्बई)- श्री श्रेय जैन सुपुत्र श्री मनोज जी जैन, सुपौत्र श्री बृजेन्द्र सिंह जी जैन (निर्मल जी) ने IIT - JEE 2009 की परीक्षा उत्तीर्ण कर आई.आई.टी. पवई, मुम्बई में इन्जीनियरिंग B.Tec. में प्रवेश लिया है। आपके पूरे परिवार की आचार्य प्रवर एवं संत-साध्वी मंडल के प्रति अगाध श्रद्धा भक्ति है।

चेन्नई- सुश्री सुरभि जैन पुत्री श्री राजेश जी चोरड़िया, सुपौत्री श्री बस्तीमल जी चोरड़िया ने दसवीं बोर्ड की परीक्षा में 90% अंक प्राप्त किये हैं।

जोधपुर- सुश्री पायल भण्डारी पुत्री श्री देवेन्द्र जी भण्डारी ने केन्द्रीय दसवीं बोर्ड की परीक्षा में 92% अंक प्राप्त किये।

जोधपुर- सुश्री कोमल भंसाली सुपुत्री श्रीमती कान्ता जी एवं श्री विरेन्द्र जी भंसाली (अध्यक्ष, श्री जैन रत्न युवक परिषद्, जोधपुर) ने जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर से **B.com (Hons.) Accounting** में 77% अंकों के साथ प्रथम स्थान प्राप्त कर स्वर्णपदक अर्जित किया है। आपने पूर्व में भी सीनियर सैकण्डरी परीक्षा में राजस्थान में छठा स्थान, सी.ए. फाउण्डेशन **(CPT)** में भारत में 21 वां स्थान प्राप्त किया एवं सी.ए. इन्टर **(PCC)** भी अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की है। आपने आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की चतुर्थ कक्षा में 89 % अंक प्राप्त किए।

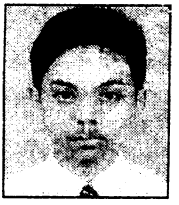

कोलकाता- श्री सिद्धार्थ कांकरिया सुपुत्र श्री मधु-प्रेमचन्द जी कांकरिया, सुपौत्र श्री केवलचन्द जी कांकरिया ने **CBSE** की माध्यमिक परीक्षा में 94.8% अंक प्राप्त कर लक्ष्मीपत सिंघानिया एकेडमी, कोलकाता में शीर्ष स्थान प्राप्त किया है।

जोधपुर- अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के पूर्व महामंत्री श्री जगदीशमल जी कुम्भट को सत्र 2008-09 के लिए क्लब के श्रेष्ठ सचिव के रूप में सम्मानित किया गया है। श्री कुम्भट को अनेक विशिष्ट सम्मान

भी विभिन्न स्तरों पर सेवा के क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं।

जलगाँव- सुश्री रूपल बागरेचा, सुपुत्री श्रीमती अन्नु एवं श्री पवनकुमार जी बागरेचा ने दसवीं बोर्ड की परीक्षा में 92.27% अंक अर्जित किये हैं।

श्रद्धाञ्जलि

जोधपुर :- धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती गुलाबकंवर सदावत मेहता, धर्मपत्नी श्री

अमरचन्द सदावत मेहता (सेवानिवृत्त सीनियर ड्राफ्टमेन)का 61 वर्ष की उम्र में 20 जुलाई, 2009 को संथारा पूर्वक स्वर्गवास हो गया। आप मिलनसार एवं दृढ़धर्मी सुश्राविका थीं। आपने अपने जीवनकाल में मासक्षपण, पन्द्रह, अठाई, तेले, बेले एवं अनेक उपवास आदि की तपस्याएँ कीं। आप अनेक नियम रखती थीं। आपकी गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति अटूट आस्था एवं श्रद्धाभक्ति थी। आपके पति सामाजिक, धार्मिक कार्यों में विशेष रुचि रखने वाले सरलमना सुश्रावक हैं।

खेड़लीगंज (अलवर)- कवि हृदय श्री कस्तूरचन्द जी जैन 'अष्टम' का दिनांक

25 जुलाई, 2009 को निधन हो गया। सेवानिष्ठ एवं कविहृदय श्री जैन राज्य में साक्षरता अभियान में सदैव आगे रहे। वर्ष 1996 में आपको राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। खेड़लीगंज क्षेत्र की करीब 110 महिलाओं को आपने पेंशन समस्या से मुक्त कराया। आप आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा., आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के प्रति श्रद्धावन्त थे। जिनवाणी मासिक पत्रिका में आपकी कविताएँ नियमित रूप से प्रकाशित हो रही थीं। आप जीवन के अन्तिम समय में अस्वस्थ रहते हुए भी कविता लिखने में व्यस्त रहे। आप अपने पीछे पत्नी, दो पुत्र, पुत्री, पौत्र-पौत्री सहित पूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

धरणगाँव(महाराष्ट्र)- सुश्राविका श्रीमती सौ. ताराबाई धर्मपत्नी श्री पृथ्वीराज जी बागरेचा मूथा का दिनाँक 15.06.2009 को 67 वर्ष की आयु में संथारे सहित समाधिभावों में नमस्कार सूत्र सुनते-सुनते स्वर्गवास हो गया। आप धर्मपरायण, सरल स्वभावी, मुदुभाषी, सेवाभावी, सुश्राविका थीं। रात्रि भोजन त्याग, शीलव्रत-पालन, प्रतिदिन सामायिक, प्रतिक्रमण करने के साथ आपके और अनेक त्याग-प्रत्यख्यान थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा संस्कारित परिवार

छोड़कर गई हैं।

जयपुर- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री रामकल्याण जी जैन (केथूदा वाले) का 12 मई, 2009 को संथारे सहित मंगल प्रयाण हो गया। आपका जीवन पूर्णतया धार्मिक विचारमय एवं त्यागमय रहा। आप लगभग 30 वर्षों से चौविहार, नवकारसी एवं सामायिक करते थे तथा सभी को पानी का उपयोग कम करने व रात्रि भोजन त्याग करने के लिए प्रेरित किया करते थे। आपने 55 वर्ष की वय में आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के सान्निध्य में सवाईमाधोपुर चातुर्मास में आजीवन शीलव्रत के प्रत्याख्यान किये थे।

इन्दौर- अनन्य गुरु भक्त, श्रद्धानिष्ठ, धर्मनिष्ठ श्री सुनील जी चोरड़िया सुपुत्र श्री मोहनलाल जी चोरड़िया (बड़ा लवेरा बावड़ी) का 29 फरवरी, 2009 को युवा वय में आकस्मिक स्वर्गवास हो गया। आप शान्त स्वभावी, मृदुभाषी, सामायिक, स्वाध्याय, जप, तप, प्रत्यख्यान एवं जीव दया में तत्पर थे। गुरु हस्ती-हीरा-मान के प्रति आपकी अटूट श्रद्धा थी। आपके दान किये गये नेत्रों का उपयोग जरूरतमंद रोगी के कार्निया प्रत्यारोपण करने में कर दिया गया।

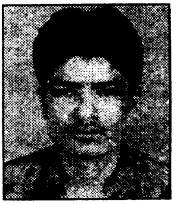

जयपुर- श्रीमान् हुकमचन्द जी लोढ़ा, नागौर हाल मुकाम जयपुर निवासी का 84 वर्ष की आयु में 5 जुलाई, 2009 को दोपहर में संलेखना संथारे के साथ स्वर्गगमन हो गया। श्रीमान् लोढ़ा सा का जीवन धार्मिक क्रिया-कलापों एवं स्वाध्याय में बीता था। वे स्पष्ट वक्ता एवं सत्यनिष्ठ थे। प्रतिदिन 4-5 सामायिक करते थे। आपके जीवन पर आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. एवं आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. तथा उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. का विशेष प्रभाव था।

ब्यावर- दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी सुश्रावक श्री अमरचन्दजी बोहरा का 10 जुलाई, 2009 को देहावसान हो गया। आप रत्नसंघ के वरिष्ठ एवं श्रद्धानिष्ठ श्रावक थे। आपके देहावसान की पूर्व संध्या पर श्रद्धेय उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा. मांगलिक सुनाने उनके निवास स्थान पधारे। आपका पूरा परिवार आचार्यप्रवर, उपाध्याय प्रवर, सन्त-सतीवृन्द एवं रत्न संघ के प्रति पूर्णरूप से समर्पित है। आप अपने पीछे धर्मपत्नी श्रीमती सूरजकंवर एवं पुत्र युवारत्न बन्धु श्री नवरतनजी एवं

गौतमजी आदि का भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं। आपका पूरा परिवार संघ सेवा में सर्वतोभावेन सक्रिय है।

कुण्डेरा (सवाईमाधोपुर)- सुश्रावक श्री घनश्याम जी जैन (कम्पाउन्डर) का 8 जून, 2009 को 65 वर्ष की वय में देहावसान हो गया। आपका जीवन सरलता, सहिष्णुता, उदारता आदि गुणों से ओत-प्रोत था। आपमें गुरु भगवन्तों के प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति की भावना थी। आप अपने पीछे भरा पूरा संस्कारित परिवार छोड़ कर गये हैं।

बैंगलोर- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सागरमल जी बागमार सुपुत्र स्व. श्री माणकचंद जी बागमार का 55 वर्ष की वय में 21 मई, 2009 को आकस्मिक निधन हो गया। आपकी गुरु हीरा, गुरु मान के प्रति अटूट आस्था थी। आपके रात्रि भोजन त्याग, पर्व तिथियों पर हरी सब्जी त्याग था। आप शीलव्रत पालन के साथ धोवन पानी का सेवन करते थे। आप अपने पीछे सुसंस्कारित परिवार छोड़कर गए हैं।

चेन्नई- सुश्राविका श्रीमती देवीबाला बरड़िया धर्मपत्नी श्री राजेन्द्र जी बरड़िया एवं सुपुत्री श्री आर. प्रसन्नचन्द चोरड़िया (नोखा चान्दावताँ) का 14 जून,2009 को 39 वर्ष की आयु में अकस्मात् निधन हो गया। आप धर्मपरायण, सरल स्वभावी, सेवानिष्ठ, मुदुभाषी, विनयवान सुश्राविका थीं। ज्ञानगच्छ में दीक्षित स्व. श्री मिलापमुनि जी (छोटे) म.सा. एवं वर्तमान महासतीजी श्री रेवती जी म.सा. की संसारिक पुत्रवधू थीं। आप अल्प आयु में भी स्वाध्याय, धर्म आराधना, त्याग-प्रत्यख्यान, नित्य-नियम करती रहीं और दूसरों को भी करने की प्रेरणा देती रही थीं।

लखनऊ- शोधपत्रिका शोधादर्श के विद्वान् सम्पादक श्री रमाकान्त जी जैन का 26 मई,2009 को असामयिक निधन हो गया। लखनऊ की विभिन्न साहित्यिक और सामाजिक संस्थाओं से आप जुड़े थे। तीर्थंकर महावीर स्मृति केन्द्र समिति, उ0प्र0 के आप महामंत्री थे और भुशुण्डि साहित्य संस्थान के परामर्शदाता थे। उनके साहित्यिक अवदान और सम्पादकीय कौशल का समादार करते हुए अखिल भारतीय साहित्य

संगम, उदयपुर द्वारा 30 अप्रैल 2009 को उन्हें 'सम्पादक सरताज' की सम्मानोपाधि से अलंकृत किया गया। विभिन्न स्थानीय एवं अखिल भारतीय साहित्यिक एवं सामाजिक संस्थाओं द्वारा उन्हें समय-समय पर सम्मानित किया जाता रहा। आपकी ख्याति एक सौम्य, सरल स्वभावी और सहृदय मानव के रूप में थी। आप अपने पीछे पत्नी और दो पुत्रों एवं एक पुत्री का भरा-पूरा परिवार छोड़ गए हैं।

कोप्पल- सुश्राविका सौ. कमला बाई धर्मपत्नी श्री माणकचन्द जी मेहता का 5 जुलाई, 2009 को संथारापूर्वक देहावसान हो गया। आपने मासक्षपण सहित अनेक छोटी-बड़ी तपस्याएँ करने के साथ अपने जीवन को नियमित सामायिक एवं प्रतिक्रमण करके आगे बढ़ाया।

जोधपुर- सुश्राविका श्रीमती बदनकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री बस्तीमल जी बोहरा

का 93 वर्ष की वय में 9 जुलाई, 2009 को 28 दिन के सागारी संथारे सहित स्वर्गवास हो गया। आपकी सभी संप्रदाय के साधु-साध्वियों के प्रति अगाध श्रद्धा थी। आपने वर्षीतप अठाइयाँ, नौ, ग्यारह तथा तीन, चार व पाँच की कई तपस्याएँ कीं। विगत पाँच दशक से आपके रात्रि भोजन-त्याग, चौविहार, जमीकन्द का आजीवन त्याग एवं पर्व-तिथियों पर हरी सब्जी का त्याग तथा दिन में भी त्याग व्रत रहता था। आप नित्य 7 से 11 सामायिक व दोनों समय प्रतिक्रमण करती थीं। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़ कर गई हैं।

बालोतरा- सुश्रावक श्री सोहनलाल जी बांठिया का दिनांक 29.7.2009 को स्वर्गवास हो गया। आपकी परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा., आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा., उपाध्याय श्री मानचन्द्र जी म.सा. के प्रति अगाध श्रद्धा भक्ति थी। परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर के बालोतरा चातुर्मास के दौरान आपकी सेवाएँ अनुकरणीय रहीं। सामाजिक कार्यों में भी आपका योगदान सराहनीय था।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

12076 Shri M. Navaratan ji Khincha, Bangalore (Karnataka)
12077 श्री नवीन जी जैन, 63/65, हीरापथ, मानसरोवर, जयपुर (राज.)
12078 Shri JinendraKumarji Jain,Dhansar,Dhanbad (Jharkhand)
12079 श्री दीपक जी मेहता,प्लॉट नं. 3/304, विवेक खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ (उ.प्र.)
12080 डॉ. लालचन्द जी जैन, 3/390, अरावली विहार, अलवर (राज.)
12081 श्री सागरमल जी जैन, झंडा चौक, चौमहला, झालावाड़ (राज.)
12100 श्री रमेश जी भंडारी, भवानीसिंह रोड, सुभाष मार्ग, जयपुर (राज.)
12101 श्री मीठालाल जी चौपड़ा, महावीर कॉलोनी, बालोतरा, बाड़मेर (राज.)
12102 श्री किशोर कुमार सालेचा, महावीर कॉलोनी, बालोतरा, बाड़मेर (राज.)
12103 श्री घीसूलालजी वैद मेहता, पुरुषोत्तमपुरा, शम्भूनाथ चौक, बालोतरा, बाड़मेर (राज.)
12104 श्रीमती सज्जनकुमारीजी लोढ़ा,ए-338,तलवंडी, मॉडर्न स्कूल के सामने, कोटा (राज.)
12105 श्री चन्दनमल जी छाजेड़, सन्तराम सिन्धी कॉलोनी, सांवेर रोड, उज्जैन (म.प्र.)
12106 श्री वर्धमान कुमार जी तलेसरा, विवेकानन्द कॉलोनी, नील गंगा, उज्जैन (म.प्र.)
12107 श्री कैलाशचन्द जी चोरड़िया, व्यायामशाला की गली, भागसीपुरा, उज्जैन (म.प्र.)
12108 श्री कोठारी चाँदबाई ग्रन्थालय, जय ट्रेडर्स, औबेदुल्लागंज, रायसेन (म.प्र.)
12110 Shree Chandraprabhu Jain College, Minjur, Thiruvallur (TN.)
12111 श्री हेमन्तकुमार जी जैन (जुठाकर वाले),कजोड़ी का नगला,गंजखेरली, अलवर (राज.)
12112 श्री कांतीलाल जी कोठारी, डॉयरेक्टर बंगला, भीकमचंद जैन नगर, जलगाँव (महा.)
12113 Shri B. Sukanraj ji Pagariya, Ashoka Road, Mysore(Karnataka)

500/- श्री डी. बोहरा परिवार, चेन्नई के सौजन्य से

12082 श्री चन्दालाल जी जैन, आदित्य मार्ग, गुलाब बाड़ी, कोटा (राज.)
12083 सुश्री आरती जी जैन, 574, एल.आई.जी., सेक्टर बी, 71 स्कीम, इन्दौर (म.प्र.)
12084 श्री महेन्द्र कुमार जी जैन, विजय मार्केट, घण्टाघर, कोटा (राज.)
12085 श्री हीरालालजी कोठारी,शांतिनगरवाली गली,आश्रमरोड,उस्मानपुरा,अहमदाबाद(गुज.)
12086 Shri Ramesh Kumar ji Nahar, Ashokapuram, Calicut (Kerala)
12087 Shri Bhawar Lal ji Khated, Guminipoondi (Tamilnadu)
12088 Shri Ashok Chand ji Surana, Mangadu, Chennai (Tamilnadu)
12089 Shri Mahaveer Chand ji Kanted, Guminipoondi (Tamilnadu)
12090 Shri Mahaveerji Pagar,Arcot Road, Uirugambakam (Tamilnadu)
12091 Shri Rajesh Kumar ji Jain, Bricklin Road, Chennai(Tamilnadu)
12092 Shri Vimal Chand ji, Purasawakkam, Chennai(Tamilnadu)

12093 Shri Roshan Chand ji Golecha, Chennai (Tamilnadu)
12094 Shri Suresh ji Saklecha, Chennai (Tamilnadu)
12095 Shri Jawar Lal ji Khiwasra, Royapuram, Chennai (Tamilnadu)
12096 Shri Devraj ji Nahar, Near Cherooty Road, Calicut (Kerala)
12097 Shri Dharmi Chand ji Bohara, Peravallur, Chennai(Tamilnadu)
12098 Shri Pawan Kumar ji Jain, Pudupet, Chennai (Tamilnadu)
12099 Shri Dharmi Chand ji, Bazar Street Chengalpetty (Tamilnadu)
12114 श्री ऋषभ जी जैन, टोडरा बाजार, फलौदी क्वारीज, सवाईमाधोपुर (राज.)

250/- श्री व्ही पारस भय्या, उज्जैन के सौजन्य से

12109 श्री आशिष कुमार जी जैन, स्टेशन रोड, चौथ का बरबाड़ा, सवाईमाधोपुर (राजस्थान)

जिनवाणी हेतु साभार प्राप्त

11000/- श्री रामलाल जी, झूमरलाल जी, शांतिलाल जी, रतनलाल जी, अमृतलाल जी, गौतमचन्द जी, धीरज कुमार जी कवाड़, चेन्नई (तमिलनाडु), सुश्री सिन्धु जी कवाड़ की भागवती दीक्षा के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री पुखराज जी आबड़, चेन्नई, पूज्य पिताजी श्री जवाहरलाल जी आबड़ (पालासनी निवासी) के स्वर्गवास हो जाने पर उनकी पुण्यस्मृति में भेंट।

2100/- श्री जयप्रकाश जी, धर्मचन्द जी निहाल जी लोढ़ा, जयपुर, पूज्य पिताजी श्री हुकमचन्द जी लोढ़ा का समाधिमरण दिनांक 05.7.2009 को होने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

2100/- श्री महेन्द्र कुमार जी, ललितकुमार जी गोलेच्छा (गिरी वाले), ब्यावर, जिला-अजमेर (राज.), सौ. श्वेता सुपुत्री श्री महेन्द्रकुमार जी गोलेछा संग चि.विनीत सुपुत्र श्री धनराज जी कवाड़, जोधपुर के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री सुरेश जी, विजयराज जी भंसाली, मुम्बई, कु. प्राची जी सुपुत्री श्री सुरेश जी सुपौत्री स्व. श्री विजयराज जी भंसाली के एमएचसीईटी में महाराष्ट्र में 79वीं रेंक व एचएससी में 88% अंक प्राप्त करने की खुशी में भेंट।

1100/- श्री भंवरलाल जी, प्रदीप कुमार जी, पारस कुमार जी डोसी सपरिवार, हैदराबाद, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के अहमदाबाद चातुर्मास में दर्शन लाभ के उपलक्ष्य में तथा चि. विनेश जी एवं पुत्रवधु द्वारा गुरु आम्नाय ग्रहण करने के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्रीमती एस. मैनाकँवर, बी. चंचलदेवी जी, एस. आशादेवी जी, आर. बिन्दु देवी जी बागमार (कोसाणा वाले), अशोका रोड-मैसूर, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द जी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन लाभ एवं उनके पावन सान्निध्य में तीन महासतियाँ म.सा. द्वारा मासक्षपणोपरान्त तपस्या करने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1001/- श्री विमल कुमार जी, रिषभ कुमार जी, उनियारा, चि. रिषभ कुमार को पुत्ररीत्न 'चहक' की प्राप्ति होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1000/- श्रीमती शकुन्तला जी जैन, अलवर, की ओर से सप्रेम भेंट।

1000/- श्री प्रकाशमल जी, सुनील कुमार जी बोथरा, चेन्नई, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र

जी म.सा. आदि ठाणा संत-सती मंडल के अहमदाबाद में दर्शन लाभ प्राप्त होने की खुशी में भेंट।

1000/- श्रीमती पुष्पा जी भण्डारी धर्मपत्नी स्व. श्री महिपालचन्द जी भण्डारी, चेन्नई (तमि.), शासन प्रभाविका साध्वी प्रमुखा महासती जी श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. के 76 वें जन्म दिवस की खुशी में सप्रेम भेंट।

700/- श्री अरूण जी, अरविन्द जी सदावत मेहता, जोधपुर, अपनी मातश्री श्रीमती गुलाबकंवर जी धर्मपत्नी श्री अमरचन्द जी सदावत मेहता (सेवानिवृत्त सीनियर ड्राफ्टमेन) के दिनांक 20 जुलाई, 2009 को संथारापूर्वक स्वर्गगमन होने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

501/- श्री धनसुरेश जी, आशीष जी जैन, सवाईमाधोपुर, चि. सम्यक् जैन सुपौत्र इन्द्रा-धनसुरेश जी जैन एवं सुपुत्र अनुप्रिया-आशीष जैन के जन्म दिनांक 8.05.09 को होने की खुशी में भेंट।

501/- श्री भंवरलाल जी, दुलीचन्द जी जैन, सवाईमाधोपुर, चि. शैलेन्द्र कुमार जी जैन के शुभविवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

501/- श्री प्रकाशचन्द जी, आशीष जी एवं अमित जी डोसी, चेन्नई, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा के अहमदाबाद में दर्शन लाभ प्राप्त करने के उपलक्ष्य में भेंट।

501/- श्री शांतिलाल जी लूणावत, वीरपिता महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी म.सा., पीपाड़सिटी, महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी म.सा. सहित महासती त्रय द्वारा मासक्षपणोपरान्त तप पूज्य आचार्य भगवन्त के पावन सान्निध्य में करने के उपलक्ष्य में जीवदया खाते सप्रेम भेंट।

501/- श्री हनवन्तराज जी, भीमराज जी भंसाली, जोधपुर (राज.), अपने सुपुत्र श्री हितेश जी भंसाली सुपौत्र श्री भीमराज जी भंसाली के इंजीनियरिंग में उत्तीर्ण होने पर भेंट।

500/- श्री सुभाषमल जी, सुमित कुमार जी लोढ़ा (अजमेर वाले), चेन्नई, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री हीराचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा सन्त-सती मंडल के पालड़ी-अहमदाबाद चातुर्मास में दर्शनलाभ के उपलक्ष्य में भेंट।

500/- श्री जम्बू कुमार जी, बुद्धिप्रकाश जी, चन्द्रप्रकाश जी, कमलेश जी, राजेश जी जैन (बगावदा वाले), जयपुर, चि. मुकेश का शुभविवाह सौ.कां. रीना के साथ 1 जुलाई, 2009 को सम्पन्न होने की खुशी में भेंट।

500/- श्री रामस्वरूप जी, कमलेश जी, अशोक जी, राजेश जी, निर्मल जी, जयपुर, श्री रामकल्याण जी जैन (केथूदा वाले) का दिनांक 12 मई,2009 को समाधिमरण के साथ देवलोक गमन हो जाने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

500/- श्री मनोज कुमार जी जैन, सिकन्दराबाद (आगरा), आचार्यप्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा. एवं महासती श्री मुक्तिप्रभा जी म.सा. आदि ठाणा के प्रथम बार अहमदाबाद में दर्शन करने व अपनी सुपुत्री सोना के लघुवय में प्रथमबार उपवास करने एवं सामायिक प्रतिक्रमण सीखने के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्रीमती ललिता जी गोलेच्छा धर्मपत्नी श्री उत्तमचन्द जी गोलेच्छा, चेन्नई (तमि.), शासन प्रभाविका साध्वी प्रमुखा महासती जी श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. के 76 वें जन्म दिवस की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्री आयुष जी बोहरा, जोधपुर (राज.), अपने परदादी श्रीमती बदनकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री बस्तीमल जी बोहरा का दिनाँक 9 जुलाई, 2009 को सागारी संथारे के साथ स्वर्गवास होने पर उनकी स्मृति में भेंट।

500/- श्री जयेश जी बोथरा, जोधपुर (राज.), अपने परनानी श्रीमती बदनकंवर जी धर्मपत्नी स्व. श्री बस्तीमल सा बोहरा का दिनाँक 9 जुलाई, 2009 को सागारी संथारे के साथ स्वर्गवास होने पर उनकी स्मृति में भेंट।

500/- श्री नवरतनमल जी, गौतमचन्द जी, अमितकुमार जी बोहरा, ब्यावर-अजमेर (राज.), पूज्य पिताजी श्री अमरचन्द जी बोहरा की पुण्य स्मृति में भेंट।

500/- श्री चौथमल जी, ओमप्रकाश जी जैन, इन्दौर (म.प्र.), सौ. दीप्ति (चेतना) का शुभविवाह 29 जून, 2009 को सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

500/- श्रीमती पारसदेवी जी मेहता धर्मपत्नी स्व. श्री नेमीचन्द जी मेहता, पीपाड़ सिटी, अपने सुपुत्र श्री सुमतिचन्द जी मेहता के अठाई तप के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्री देवेन्द्रनाथ मोदी, श्रीमती कमला जी मोदी, लोकेन्द्रनाथ जी मोदी, ऋतु जी मोदी, जोधपुर (राज.) श्रीमती विमला बाई जी भण्डारी धर्मपत्नी स्व. रणजीत सिंह जी भण्डारी के 20 वीं पुण्य तिथि (संवत्सरी) हेतु भेंट।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल से प्रकाशित साहित्य हेतु साभार

25000/- श्रीमती सायरकंवर प्यारेलाल जी कोठारी एवं पारिवारिक जन (पाड़ीवाले-चेन्नई), अहमदाबाद, मंडल से प्रकाशित होने वाली पुस्तक 'युवा संवारें यौवन' के प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग।

25000/- श्री रामलाल जी, झूमरलाल जी, शांतिलाल जी, रतनलाल जी, अमृतलाल जी, गौतमचन्द जी, धीरज कुमार जी कवाड़, चेन्नई (तमिलनाडु), सुश्री सिन्धु जी कवाड़ की भागवती दीक्षा के उपलक्ष्य में मंडल को साहित्य प्रकाशन में सप्रेम भेंट।

21000/- श्रीमती सायरकंवर प्यारेलाल जी कोठारी एवं पारिवारिक जन (पाड़ीवाले-चेन्नई), अहमदाबाद, मंडल से प्रकाशित पुस्तक 25 बोल के प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग।

20000/- श्रीमती सायरकंवर प्यारेलाल जी कोठारी एवं पारिवारिक जन (पाड़ीवाले-चेन्नई), अहमदाबाद, साहित्य प्रकाशन हेतु आर्थिक सहयोग।

जीवदया हेतु साभार

1000/- श्रीमती मानकंवर जी नाहटा, रायपुर (छत्तीसगढ़), स्व. श्री नेमीचन्द जी नाहटा की पुण्य तिथि पर जीवदया हेतु भेंट।

2100/- श्रीमती रीता जी धर्मपत्नी श्री नवीन जी बोथरा, दिल्ली, द्वारा भेंट।

1100/- श्री पारसमल जी, उम्मेदराज जी, दिनेश जी, अभय जी, कृश जी, ध्वज जी लोढ़ा, महामंदिर-जोधपुर, पूज्य आचार्य भगवन्त व श्रद्धेय महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि ठाणा के दर्शन लाभ के उपलक्ष्य में भेंट।

501/- श्री पारसचन्द जी, जितेश कुमार जी जैन, जयपुर।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार प्राप्त

10000/- श्री रामलाल जी, झूमरलाल जी, शांतिलाल जी, रतनलाल जी, अमृतलाल जी,

गौतमचन्द जी, धीरज कुमार जी कवाड़, चेन्नई (तमिलनाडु), सुश्री सिन्धु जी कवाड़ की भागवती दीक्षा के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

500/- श्रीमती पारसदेवी जी मेहता धर्मपत्नी स्व. श्री नेमीचन्द जी मेहता, पीपाड़ सिटी, अपने सुपुत्र श्री सुमतिचन्द जी मेहता के अठाई तप के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

स्वाध्याय संघ, बजरिया शाखा को साभार प्राप्त

501/- श्री भँवरलाल जी दुलीचन्द जी जैन, समिधी वाले हाल निवासी सवाईमाधोपुर, चि. शैलेन्द्र कुमार जैन के विवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

बोहरा परिवार, चेन्नई से साभार प्राप्त

श्री राजेशकुमार जी, श्री विमलकुमार जी, श्री पवनकुमार जी बोहरा परिवार एवं उनके परिवारजनों द्वारा श्रद्धेय श्री दुलीचन्द जी बोहरा एवं श्रीमती मैनादेवी जी बोहरा की 28 मई, 2009 को सम्पन्न भागवती दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट-

51000/- अ0भा0 श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ (शिक्षा-दीक्षा)

51000/- सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर। (साहित्य प्रकाशन)

50000/- जिनवाणी जयपुर (100 सदस्य बनाने हेतु)

51000/- श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर।

51000/- अ0भा0 श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर।

इसके अतिरिक्त श्रीमती मैनादेवी दुलीचंद बोहरा ट्रस्ट के गठन की घोषणा की गई, जिससे समय-समय पर विभिन्न संस्थाओं को सहयोग प्रदान किया जायेगा।

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

132000/- श्री गणपतराज जी बाघमार(कोसाना), चेन्नई (तमि.), अपने सुपुत्र श्री हेमन्त कुमार बाघमार के विवाहोपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

60000/- श्रीमती कमलादेवी दुलीचन्द जी बाघमार, चेन्नई (तमि.), श्री दुलीचन्द जी बाघमार के 60 वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में भेंट।

60000/- श्री उमरावमल जी, श्रीपाल जी सुराना, चेन्नई (तमि.) द्वारा भेंट।

12000/- श्रीमती कुशलकंवर जी मेहता, जोधपुर(राज.) द्वारा भेंट।

12000/- श्रीमती कीर्ति एवं अंकित चौधरी, मैसूर (कर्नाटक), द्वारा अपनी माता जी श्रीमती संतोषबाई जी के अक्षयतृतीया के पारणा करने पर भेंट।

12000/- श्रीमती सुमनबाई जी विजयराज जी कोठारी, ब्यावर (राज.), दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री आर.एम. डागा, दिल्ली, दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री निर्मल कुमार जी रांका एवं रमेश कुमार जी नाहर, चेन्नई (तमि.), दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री महेन्द्र कुमार जी, ललित कुमार जी गोलेच्छा, ब्यावर (राज.), दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री गौतमचन्द जी, नितेशकुमार जी कटारिया, चेन्नई (तमि.), दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

12000/- श्री कन्हैयालाल जी, विमलादेवी जी हिरण, अहमदाबाद (गुजरात), दिनांक 28 मई, 2009 को पीपाड़ सिटी में हुई दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य श्री हस्ती स्कॉलर शिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- *श्री अशोक जी कवाड़, 33, Montieth Road, Egmore, Chennai-600008 (Mob. 9381041097)*

आगामी पर्व

भाद्रपद कृष्णा 8	शुक्रवार,	14.08.2009	अष्टमी
भाद्रपद कृष्णा 12	सोमवार,	17.08.2009	पर्युषण प्रारम्भ
भाद्रपद कृष्णा 14	बुधवार,	19.08.2009	चतुर्दशी, पक्खी
भाद्रपद शुक्ला 5	सोमवार,	24.08.2009	संवत्सरी पर्व
भाद्रपद शुक्ला 8	गुरुवार,	27.08.2009	अष्टमी
भाद्रपद शुक्ला 14	गुरुवार,	03.09.2009	चतुर्दशी, पक्खी
आश्विन कृष्णा 8	शनिवार	12.09.2009	अष्टमी

बाल-स्तम्भ [जून-2009] का परिणाम

जिनवाणी के जून-2009 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'कसौटी' कहानी के प्रश्नों के उत्तर 27 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक 25 में से दिये गये हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-250/-	पीयुष जारोली-बालोतरा	24.5
द्वितीय पुरस्कार-200/-	अंकुश जैन-खेरली,अलवर	24
तृतीय पुरस्कार- 150/-	अर्पित जैन-जोधपुर	23.5
सान्त्वना पुरस्कार- 100/-	सोनल संकलेचा-जोधपुर	22
	हर्षिता श्रीश्रीमाल-जोधपुर	21.5
	गरिमा जैन-कोटा	21.5
	पल्लवी जैन-जोधपुर	21.5
	संदीप छाजेड़-बाड़मेर	21.5

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अनूठा दान छात्रवृत्ति का
जीवन बनता एक विद्यार्थी का

Surana TMT - A perfect vaccination for your constuctions.

● Excellent Bond Strength ● Greater resistance to Corrosion ● Superior Weldability ● Excellent Ductility and High Bendability ● Uniform properties throughout length ● Enhanced Resistance to Fire ● Ability to withstand Earthquakes ● Bigger savings in steel consumption (almost 18%) ● Available in Fe 415 / 500 / 550 / 600 grades with IS 1786 standard

For marketing enquiries, contact : 91-44-2855 0715 / 2855 0736

Corporate Head Office :
29, Whites Road, Second Floor, Royapettah, Chennai - 600 014.
Phone : 91-44-2852 5127 (3 Lines) / 2852 5596 Fax : 91-44-2852 0713
E-mail : steelmktg@surana.org.in / silimited@surana.org.in
Website : www.surana.org.in

IS.1786

SURANA™ yes, the best TMT RE-BARS

Surana TMT - *Lifeline of every Construction...*

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी॥

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

23, Vada malai Street, Sowcarpet
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 044-25292727
M. 9841091508

BRANCHES :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph. 26251960

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph. 26243455/56

Balalji Motors
Chennai-50, Ph. 26247077

Padmavati Motors
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

ज्ञान का एक दीया जलाइये
सहयोग के लिए आगे आइए
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का
लाभ उठाकर आनन्द पाईये

आदरणीय रत्न बन्धुवर

छात्रवृत्ति योजना में एक छात्र के लिए Rs. 12,000 **के गुणक में दान राशि** "Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund" **योजना के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट** (Donations to Gajendra Nidhi are Exempt u/s 80G of Income Tax Act, 1961) **से निम्नांकित पते पर भेंजे, पुण्यधन कमाइऐं।**

Ashok Kavad
PRITHVI EXCHANGE
33, Montieth Road, Egmore, CHENNAI-600008
Tele Fax 044-43434249, 09381041097

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का॥

GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)

22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !

No. 4 Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588

Guru Hasti Bankers :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

N0. 5, Car Street,
Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 26272906, 55689588

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये
फिर क्यों न अपनायें
धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

प्यास बुझाये, कर्म कटाये फिर क्यों न अपनायें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)

098407 18382

2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI 600040
044 32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD

S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.

NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES

NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS

NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 8 ★ मूल्य : 10 रु.
10 अगस्त, 2009 ★ भाद्रपद 2066

धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

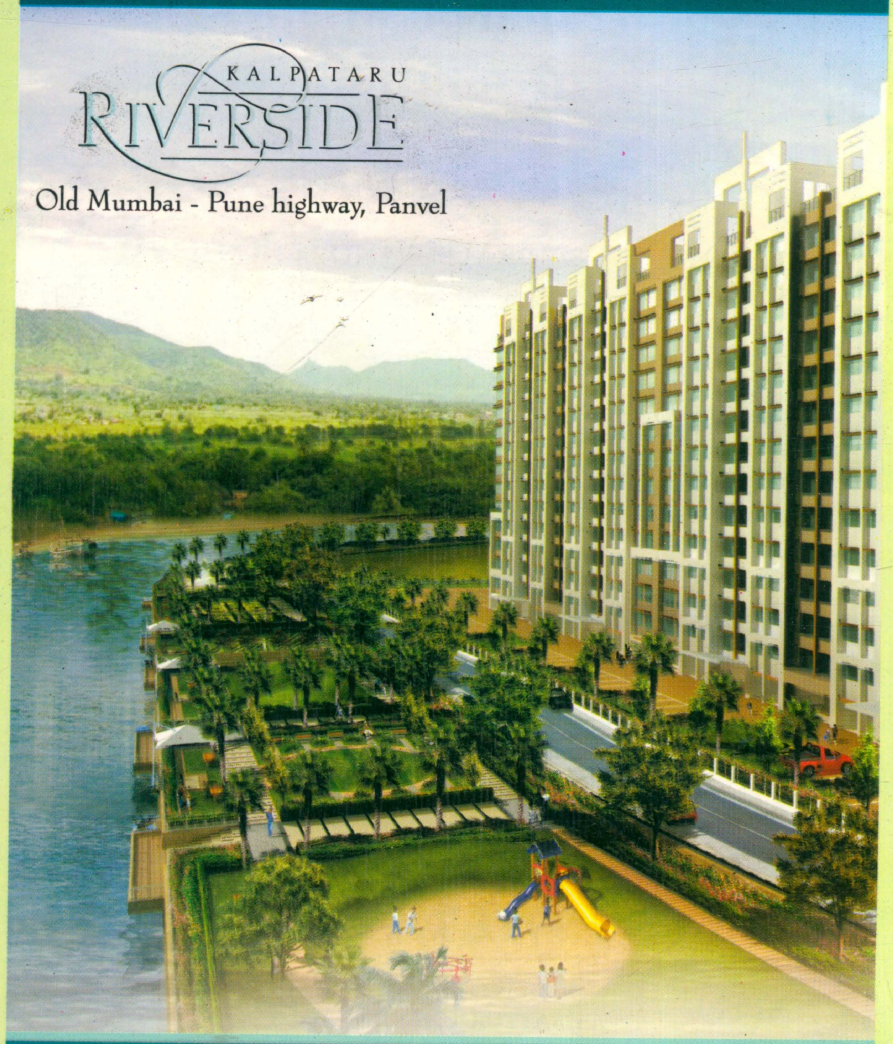

KALPA-TARU®
101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East),
Mumbai - 400 055. ● Tel.: 3064 3065, 98339 45470 ● Fax: 3064 3131
Website: www.kalpataru.com

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।